मथुरा, १ जनवरी, सन् १९४६

# नवजीवन का पथ प्रदर्शक मनोविज्ञान ।

## नवजीवन का पथ प्रदर्शक—

मनुष्य शरीर का अध्ययन करने के पश्चात् जिस महान् शक्तिशाली यंत्र पर हमारी दृष्टि केन्द्रित हो जाती है,वह है उसका अद्भुत् मन। जिसके बल पर आज वह अन्य बलशाली जीव धारियों को पीछे ढकेल कर समस्त भूमण्डल का अधिपति बन बैठा है। कदाचित् मानव मन से आश्चर्यजनक वस्तु संसार में दूसरी नहीं है । हमारी प्रत्येक अनुभूति, चिन्तन, मनन, निरीक्षण, परीक्षा, क्रियाशीलता का मूलकेन्द्र हमारा मन है । भय, साहस आनन्द, उद्वेग, विकार, संकल्प, संवेदन क्रोध, क्षोभ इत्यादि आन्तरिक भावनाओं का उदय भी हमारे मन से संयुक्त स्नायु तंतुओं, क्रियाओं, एवं प्रवृद्धियों द्वारा होता है। मनुष्य किन परिस्थितियों में क्या सोचता है ? इच्छा, द्वेष, सुख, दुःख, कल्पना, संकल्प, ज्ञान किस प्रकार होते हैं ? मानसिक वृत्तियों का मर्म, उनकी नियमबद्ध व्याख्या एवं कार्यशैली का शास्त्रीय अध्ययन मनोविज्ञान का विषय है ।

## मनोविज्ञान विज्ञान है; कला नहीं—

मनोविज्ञान का कार्य यह स्पष्ट करना नहीं है कि संवेदन, विचार, कल्पना आदि कैसे होने चाहिए किन्तु ये क्या हैं, कैसे उत्पन्न होते हैं, क्यों उत्पन्न होते हैं और किन किन नियमों के अनुसार उत्पन्न होते हैं। "कैसे होने चाहिए"—यह कलाका विषय है। नियमबद्ध कार्य कला है नियमबद्ध व्याख्या विज्ञान। मनोविज्ञान आपको यह बतायेगा कि कल्पना क्या है ? क्या, कैसे, कब उत्पन्न होती है ? उसकी क्रिया प्रक्रियाएँ क्या हैं ? इसी प्रकार मनन (Introspection) निरीक्षण ( Observation ) परीक्षा ( Experiments ) स्मृति ( Memory ) संवेदन, अवधान ( Attention ) चेतना, विकार ( Feeling ) संकल्प ( Will ) प्रतिफलन क्रियाएँ ( Reflex actions ) इत्यादि कैसे होते हैं ? क्या हैं ? किन मूल नियमों द्वारा संचालित होते हैं ? इनका कार्य क्या है ?—ये सब व्याख्याएँ और उनका नियमबद्ध वर्णन मनोविज्ञान के विषय हैं। इन मानसिक वृत्तियों का प्रयोग कैसे होना उत्तम या श्रेष्ठकर ( Ought to be ) है ?—यह सब प्रश्न कला के अन्तर्गत हैं। मनोविज्ञान हमें आन्तरिक शक्तियों का ज्ञान, उनके विकसित करने के नियम, प्रभाव, मानसिक उलझनों का "क्या, क्यों, कैसे" स्पष्ट करता है।

## हमारा अद्भुत् मन—उसका स्वभाव एवं आदतें

मनका निवास स्थान मस्तिष्क है। मन संवेदनशील एवं विचारों का पुंज है । चेतना, संवेदन, उपलब्धि, स्मृति, कल्पना, विचार, भाव, संकल्प इत्यादि मन की मुख्य वृत्तियां हैं । जगत् स्वयं मन की एक कल्पना मात्र है। मन के साथ साथ संसार की स्थिति है। जैसा हमारा मनोराज्य है, जैसे हम स्वयं हैं, वैसा ही जगत् भी है। सब प्रकार के सुखों

या दुःखों की सृष्टि भी हमारे मन के द्वारा ही होती है। मन स्वप्न की भांति निरन्तर भ्रमजाल के ताने बाने प्रस्तुत किया करता है।

मन विचारों का वृहत् भंडार है। इन सब विचारों का स्रष्टा "अहं" का विचार है। मन स्वभाव से ही चंचल है। वह एक क्षण में संसार के एक सिरे से दूसरे सिर पर चक्कर लगा देता है। वह इन्द्रियों को निरन्तर नाच नचाया करता है। वह स्थिर रहना नहीं चाहता प्रत्युत सदैव परिवर्तन, विभिन्नता, नई नई उत्तेजनाएँ उसे प्रिय हैं। परस्पर दो विरोधी तत्त्वों का द्वन्द्व कराना, कभी इधर तो कभी उधर तेजी से दौड़ना, उलटी बातों को भड़काना, प्रयोजन में फँसाना, कभी डराकर थर थर कँपा देना तो कभी हँसा हँसा कर पेट में बल डाल देना उसकी विभिन्न क्रियाएँ हैं। उसका स्वभाव नित आनन्द, प्रसन्नता, मजेदारी की ओर उन्मुख होता है। वह बाहिर्मुख होकर जरा जरा सी वस्तुओं के आकर्षण में फँस जाता है और इन्द्रियों को अतृप्त, प्रदीप्त, उत्तेजित कर देता है। वह लड़ाई कराना जानता है किन्तु एक्य, समस्वरता, संतुलन शान्ति की बात भी नहीं सोचना चाहता।

मन ज्ञान तंतुओं में क्षोभ उत्पन्न कर चित्ररूपी सरोवर में तरंगें उत्पन्न कर डालता है, बलात्कार बाहरी जगत् के मिथ्या पदार्थों को सींचता है। वह स्वभावतः एकांगी है पर अनुकरण करना खूब जानता है। कभी कभी वह हृदय को खूब जलाया करता है और हमें चिंता के अथाह सागर में ढकेल देता है। एक समय में मन में एक ही विचार आता है किन्तु वह तीव्र गति से घूमता है। ध्वनि मनको विविध कार्यों के लिए प्रेरित किया करती है। मनकी चंचल वृत्ति और व्यग्र रहने की स्थिति हमारे शारीरिक बलका क्षय करती है। बुरी आदतों, बुरी वासनाओं, बुरी बातों के लिए अच्छी बातों की अपेक्षा मन में अधिक सुझाव रहता है।

## मन का संचालक—

जहां तक इन्द्रियों का सम्बन्ध है, वहां तक मन मालिक का कार्य करता है, खूब तेजी, छीना झपटी दिखाता है किन्तु हमारे विवेक, बुद्धि, तर्क, एवं आत्मा के सामने यह अकिंचन भृत्य की भांति आज्ञाकारी है। विनम्र है और उनका दास है। आन्तरिक हलचलों को शान्त करने के लिए शुद्ध बुद्धि, तीव्र विवेक एवं अन्तदर्शन की आवश्यकता होती है। आत्मा मन की प्रेरक सत्ता है। हम नित्य प्रति देखते हैं कि अनेक पुरुष शान्ति के लिए चिल्लाया करते हैं, अशान्त और अस्थिर रहते हैं, पुराने लकीर के फ़कीर बने रहते हैं। इसका प्रभाव कारण यही है कि वे शुद्ध बुद्धि को विकसित नहीं होने देते। तीव्र विवेक से मनकी सात्विक अवस्था के द्वार खुलते हैं।

## मानसिक शक्तियों को बढ़ाने के उपायः—

मानसिक शक्तियों को पुष्ट एवं विकसित करने के हेतु उनका निरन्तर उपयोग करते रहना अनिवार्य है। उपयोगहीन वस्तु निर्बल होकर नष्ट भ्रष्ट हो जाती है। मनुष्य की आन्तरिक शक्तियों का विकास व सवर्धन २५ वर्ष की अवस्था तक होता है। तत्पश्चात् हमारा केवल अनुभव ज्ञान ही बढ़ता है।

मन की अति चंचलता, अस्थिरता, एवं व्यग्रता ज्ञान तन्तुओं में क्षोभ उत्पन्न करती है और उद्वेग उत्पन्न होता है। मनुष्य थक कर चूर चूर हो जाता है अतः मन को निष्क्रिय करने से, उसे विश्राम देने से, व्यापारों की दौड़ से रोकने पर उसके बल का रक्षण एवं संचय हो सकता है। मन को विश्राम देना एक ऐसी कला है जिससे प्रत्येक स्त्री पुरुष, धनवान निर्धन, अक्षय शान्ति लाभ कर सकता है। अक्रिय अवस्था, निःसंकल्प अवस्था मन की स्वस्थ अवस्था है। यह अवस्था मन की समस्त वृत्तियों का किसी एक केन्द्र पर एकाग्र करने से प्राप्त

नर्कों की कल्पनाएँ भी वहाँ के आदर्शों, अदूतों, एवं सुखों के अनुसार पृथक् पृथक् हैं। जिस प्रकार हमारा मन स्वप्नावस्था में तरह तरह के चित्रों का निर्माण करता है, अव्यक्त की प्रसुप्त वासनाओं से रंजित होकर अनेक रहस्यमय लीलाएँ करता हैं, उसी तरह मन ही वासनामय सूक्ष्म शरीर से अपनी कल्पना के अनुसार स्वर्ग और नर्क का बनाव करके सुख या दुःख भोगता है।

जो व्यक्ति शुभ कामनाओं में निरत रह कर लोक कल्याण के कार्यों में प्रवृत्त होते हैं उनका मन उन शुभ कर्मों के लिए कोई केन्द्र (Centre) ढूंढ़ लेता है यह केन्द्र ही स्वर्ग हैं। इसके विपरीत दूसरों को दुःखी करने वालों की अव्यक्त चेतनाएँ उन्हें अन्दर ही अन्दर अव्यक्त रूप से डराया करती हैं। ऐसे व्यक्तियों का मन भयंकर फलों की कल्पना में लगा रहता है और मलीन भावों के कारण मृत्यु पश्चात् दुःखदायी नर्कों की कल्पना करता है। वस्तुतः स्वर्ग और नर्क मन की उत्कृष्ट एवं निकृष्ट भूमिकाएँ हैं।

## प्रेरणा का मूल केन्द्र—

कुछ मनोवैज्ञानिकों ने प्रेरणा (Inspiration) की परिभाषाएँ गढ़ने का प्रयत्न किया है। कुछ परिभाषाएँ देखिए—

"प्रेरणा ईश्वर ज्योति है जो सात्विक प्रकृति के महापुरुषों को अपना जीवन कार्य करने का आदेश तथा उत्साह देती है।"

"प्रेरणा मनुष्य के अन्तःस्थित अगाध सामर्थ्य को बाहर प्रकट करने की चेतावनी है। हमारे मनः प्रदेश में जो वास्तविक सामर्थ्य हैं, उसका बहुत थोड़ा हिस्सा वाह्य जीवन में प्रकट करते हैं। प्रेरणा हमारी आत्मा को देदीप्यमान कर मनुष्य को आगे ढकेलती है।

आधुनिक मनोवैज्ञानिक प्रेरणा को ईश्वरीय आवाज या निर्देश नहीं मानते। परमेश्वर किसी अजब तरीक़े से हमसे कोई विशेष कार्य करने का संकेत करता हो—सो बात नहीं है। आधुनिक मनोवेत्ताओं ने ऐसी अद्भुत प्रक्रियाओं का केन्द्र मनुष्य का अव्यक्त मन (Unconscious mind) माना है। वे यह नहीं मान सकते कि प्रेरणा कोई नवीनत चिनगारी है जो हमारे भीतर की गुप्त अग्नि को प्रज्वलित करती है।

उनके अनुसार सब कुछ सामर्थ्य हमारे अव्यक्त प्रदेश में पहिले से ही प्रस्तुत थी। गुप्त रूप से समस्त शक्ति पहिले से ही अन्तः स्थित थी। हम उससे अपरिचित रहे, अतः वह यों ही निश्चेष्ट पड़ी रही। वह अप्रकट रूप से प्रस्तुत थी, किन्तु उस पर मिट्टी, कीचड़ का पर्त जम जाने के कारण वह व्यक्त (Conscious) या चेतन मन के केन्द्र से बहुत दूर जा पड़ी थी। वह छुप कर अव्यक्त के किसी कोने में बैठ गई थी। उपयुक्त अवसर, उपयुक्त परिस्थिति या उपयुक्त वातावरण पाकर या किसी ठेस के संघर्ष से एकाएक वह गुप्त सामर्थ्य के रूप में प्रकट हो गई। उन आश्चर्यजनक सामर्थ्यों को देख कर मनुष्य ने समझा कि कोई नवीन अदृष्ट शक्ति शरीर में प्रवेश कर गई।

महान् कार्य का अद्भुत बीज पहिले से ही वर्तमान था, किन्तु उसके इर्द गिर्द ऐसी उर्वरा भूमि न थी कि वह अंकुरित, पल्लवित या फलित हो पाता। उसे अनेक तत्त्वों के सहयोग की आवश्यकता प्रतीत होती है जो उसे अंकुरित होने में सहायता प्रदान करें। इन तत्त्वों के अभाव में मनुष्य यह मान बैठते हैं कि उनमें ऊँचा उठने की क्षमता नहीं है। मनके अव्यक्त प्रदेश के बीज कब अंकुरित हो उठे, यह कोई नहीं कह सकता। अतः आधुनिक मनोवैज्ञानिक प्रेरणा को मन के अगाध सामर्थ्य की प्रतीति ही मानेगा।

मनुष्य किसी दैवी शक्ति से प्रेरित होकर महान् आश्चर्यजनक कार्य कर डालते हैं और उन्हें देख कर लोग चकित रह जाते हैं। आप मनोवैज्ञा-

रहती है। गुप्त मन के महत्त्व, शक्ति, कार्य प्रणाली, के सन्मुख चेतन मन की कोई गणना नहीं की जा सकती।

जिस प्रकार प्रत्येक चेतन वस्तु का अचेतन जगत् में ही सर्व प्रथम सूत्र पात होता है, उसी प्रकार प्रत्येक चेतन भावना उस अचेतन क्षेत्र में प्रविष्ट होकर हमारे व्यक्तित्व की एक स्थायी वृत्ति होकर उसे प्रभावित करती है। प्रार्थना ऐसी ही एक चेतन भावना ( आत्म-सूचना ) है जो हमारे मानसिक संगठन कार्य में उचित भाग लेती है।

प्रार्थना में जब आप कहते हैं—"सर्वशक्तिमान् परमेश्वर की मुझ पर महती कृपा है, उनकी दया दृष्टि मेरे कर्मों को उचित मार्ग पर लगाती है; कोई प्रतिकूल परिस्थिति मुझ पर प्रभुत्व नहीं कर सकती। विषम परिस्थिति से उद्धार करने वाला मेरे भीतर विद्यमान है। अतः मैं विकट से विकट प्रतिकूलता से भी विचलित नहीं होता।"—तो ये सब आत्मसंकेत हमारे अन्तर की अचेतन वृत्ति ग्रहण कर लेती है तथा वह सत्वस्थ होकर हमारे मानसिक जीवन की एक स्थायी वृत्ति हो जाती है।

प्रार्थना एक प्रकार से स्वेच्छित आत्म संकेत है। यह संकेत ही हमारे अचेतन जगत् में कार्य कर हमें ऊपर उठाकर कार्य शक्ति का नव भंडार खोल देता है। शरीर तथा मन के समस्त रोगों को दूर करने के लिए प्रार्थना की उपयोगिता सिद्ध हो चुकी है। वास्तव में प्रार्थना कोई नई शक्ति उत्पन्न नहीं करती प्रत्युत स्वयं हमारी सोती हुई निश्चेष्ट शक्तियों को उत्तेजित कर देती है। प्रार्थना का अचेतन वृत्ति पर ही प्रभाव पड़ता है और यही फलफूल कर प्रायः एकाएक प्रकट हो सबको चकित कर देती है।

## मानव जीवन की प्रचंडतम शक्ति—

इस विषय में पाश्चात्य मनोवैज्ञानिक फ्राइड के विचार बड़े विचित्र एवं क्रान्तिकारी हैं आपने काम वासना ( Sex impulse ) को मानव-जीवन की मूल शक्ति माना है। आपका विचार है कि संसार के प्रत्येक मानव में यह शक्ति प्रचंड रूप से कार्य कर रही है अन्तर केवल इतना ही है कि कुछ में इसका शोधित स्वरूप है तथा अन्य में असंयमित एवं उग्र स्वरूप। प्रत्येक प्रकार के आकर्षण में कामलिप्सा अन्तर्निहित है। माता-पुत्र, पिता पुत्री तक के आकर्षण में कामलिप्सा व्याप्त है। यही नहीं कि कामलिप्सा के लिए विषय लिंग ( Opposite sexes ) आवश्यक हों, समलिंग व्यक्तियों तक में गुप्त रूप से कामलिप्सा आकर्षण का कारण बन जाती है। कामलिप्सा विहीन आकर्षण असंभव है।

फ्राइड महाशय ने ईश्वर भक्ति, देशभक्ति, पितृ-भक्ति, वात्सल्य इत्यादि की मूल प्रवर्तक शक्ति काम वासना को ही मान लिया है। नाचने, गाने, वस्त्राभूषण से सुसज्जित होने, शृङ्गार करने, चित्र, सिनेमा, नाटक देखने, परिमार्जित कलाओं के अध्ययन, कविता, सौंदर्योपासना इत्यादि में इसी वृत्ति को प्रधानता दी है। जुंग इत्यादि का मत है कि फ्राइड साहब ने काम शक्ति को आवश्यकता से अधिक महत्त्व प्रदान कर दिया है। हमारा "अहं" भाव मानव जीवन की वास्तविक प्रेरक शक्ति है।

---

जटिल आदतें मनुष्य के मन में किसी विशेष प्रकार की भावना-ग्रन्थि से सन्नद्ध रहती हैं। मनुष्य इन आदतों को छोड़ना चाहते हुए भी नहीं छोड़ पाता। इससे मुक्ति के लिए मनोविश्लेषण की आवश्यकता है।

× × ×

मनुष्य के संवेगात्मक जीवन में परिवर्तन होने पर उसकी कुत्सित आदतें सदा के लिए दूर हो जाती हैं।

× × ×

# धार्मिक सिद्धान्तों पर विश्वास क्यों करें ?

( मनोविज्ञान की दृष्टि से धर्म पर एक दृष्टि )

---

प्रत्येक छोटी सी वस्तु के पृष्ठ भाग में एक वृहत भंडार है। बूँद के पीछे समुद्र, बीज के पीछे पेड़, पैसे के पीछे टकसाल। यदि एक बूंद के पीछे एक महासागर लहरा रहा है, बीज में एक विशाल वृक्ष हिलोरें ले रहा है, पैसे के पीछे खनखनाती हुई टकसाल है तो क्या हमारे "ज्ञान" के पीछे कुछ नहीं ? जो दिव्यज्योति कभी कभी अन्तःकरण में देदीप्यमान हो उठती है,क्या उसका सूर्य नहीं है ? जो महान् प्रेरणाएँ हृदय में उदित होती हैं क्या उनका महान् भंडार कोई नहीं है ? मनोजगत्में जो अमृतका स्रोत प्रवाहित होरहाहै,क्या उसका अक्षय समुद्र कोई नहीं ? पर, वास्तव में बात ऐसी नहीं है । ज्ञानकी छोटी सी किरण के पीछे भी एक विशाल कल्पतरु असीम भंडार, अक्षय समुद्र है । ज्ञान लावारिस अनाथ नहीं है। बस, इसी को मैं ईश्वरीय ज्ञान कहता हूं। प्रत्येक आत्मा एक नन्हीं सी किरण है जो निरन्तर इस ज्ञान-सूर्य की ओर संकेत किया करती है।

## आर्य संस्कृति का मूल आधार—

एक आत्माही सत्य है तथा जगत् में जो नाना-प्रकार की विभिन्नता है, वह उस एक ही विशाल आत्मा के अनेक कल्पित नाम एवं रूपों का बनाव है; अतः सबकी एकता सच्ची तथा अनेकता झूठी है ? मिथ्या है ? यह हिन्दू धर्म की आधार शिला है। इसी के आधार पर जो देश काल, परिस्थिति के अनुसार समय समय पर मनुष्यों के पृथक् पृथक् व्यवहारों की व्यवस्थाएँ होती हैं, वह आर्य संस्कृति के कर्म काण्ड हैं । अनेकों में एक और एक में अनेक का सिद्धान्त आर्य संस्कृति का जीवात्मा है और इस मत के अनुसार कार्य में संलग्न होना उसका शरीर है । शरीर समय समय पर बदलता रहता है किन्तु जीवात्मा एक बना रहता है।

जिन लोगों की बुद्धिका विकास अधिक होता है। वे ही उक्त ज्ञान की ऊँची चोटी पर चढ़ते हैं। हम देखते हैं कि प्रत्येक युग में, शान्ति के आकांक्षी बुद्धिमान् पुरुषों ने नाना प्रकार के मजहब चलाये। ये सब शान्ति प्राप्त करने और ईश्वरीय ज्योति को समझने के विविध रूप थे। अपने अपने स्थान पर ये नाना प्रकार के मत, सम्प्रदाय, पन्थ उपयुक्त थे और समयानुसार सभी की आवश्यकता भी थी। जिस देश में जिस जनता की जैसी योग्यता, मानसिक विकास, या बुद्धि हुई उसमें वैसे ही धर्म चल पड़े और बुद्धि के विकास के साथ साथ अनेक व्यवस्थाएँ बनती गईं किन्तु सबके भीतर "एक आत्मा ही सत्य है" की ही निरन्तर ध्वनि आती रही। ये व्यवस्थाएँ—विभिन्न मत बनते रहे । आदि काल से इस प्रकार उस ज्ञान सूर्य को समझने वाला मनुष्य मूर्ख नहीं था। उसे धर्म की छाया में चिर अभिलाषित शान्ति मिली, बुद्धि को एक आश्रय प्राप्त हुआ, मन के पुर्जों में तेल लगा । मध्यकाल में तो इन धर्मों की संख्या काफी बढ़ गई किन्तु क्रमशः बुद्धि के विकास से मनुष्य फिर धर्म के प्राण ईश्वर—की एकता पर केन्द्रित होने लगे । शिक्षा प्रचार से आजकल के व्यक्ति सम्प्रदायों के बंधन में नहीं बँधना चाहते । वे तो आर्य संस्कृति के सच्चे स्वरूप से ही परिचित होना चाहते हैं।

दर्शनशास्त्र.नाना पंथ,मजहब,धर्म आदि झूठ नहीं हैं। उनमें एक महान संदेश छिपा है । यह संदेश सत्य शिव सुन्दर का संदेशवाहक है । ये सभी शास्त्र एकता के सिद्धान्त के पोषक हैं । मनोविज्ञान इसे वीर की पूजा ( Hero-worship ) के अन्तर्गत लेता है। वह कहता है कि प्रारम्भिक काल से ही व्यक्ति एक अज्ञान शक्ति से भयभीत होते रहे

उसकी पूजा पाठ में निरत रहे, बलिदान देते रहे और शान्ति प्राप्त करते रहे । धर्म इसी पूजा का प्रचालित स्वरूप है। श्री गीताजी भी किसी दर्शन का तिरस्कार नहीं करती क्यों कि जहां एकता का प्रतिपादन है, वहां कोई अलग नहीं रह जाता। चार्वाक, जैन, बौद्ध, मीमांसा, न्याय, वैशेषिक, योग, सांख्य आदि सभी दर्शन मनुष्यों को अज्ञान की दलदल से निकाल कर एकता की ओर लाने में सहायक हैं।

## अविचार की दलदल से निकलिए—

नास्तिकता जीवन का दिवाला निकाल देती है। नास्तिक उस अन्धे की तरह है जो बिना लकड़ी लिए संसार के चारों ओर भटक रहा हो और व्यर्थ में शान्ति का उपक्रम कर रहा हो । जिसका अन्तःकरण मल-विक्षेप और अन्धकार के आवरण से आच्छादित रहता है वह कुतर्क के जंजाल में पड़ कर आवागमन के मोहक-चक्र मे घूमता रहता है। नाना प्रकार के दुःख, विकार, और भ्रम उसे विक्षुब्ध किए रहते हैं। अन्ततः वह पाप योनि को प्राप्त होता है ।

प्रियवर; अज्ञान निद्रा से चेत जाइये। आपके जीवन का चरम लक्ष्य अत्याधिक आनन्द की प्राप्ति है और अत्याधिक आनन्द का स्रोत केवल धर्म ही है। धर्म की शान्ति अक्षय शान्ति है। सच्चिदानन्दघन व सुदेव परमात्मा की छाया ही निरन्तर रहने वाली छाया है। धर्म के मार्ग का अनुसरण कीजिए इस लोक और परलोक में कल्याण करने वाली महापुरुषों द्वारा दी हुई आत्म-विद्या में निमज्जन कीजिए । परमात्मा के तत्त्व को यथार्थ रूप से जानने वाला पुरुष ही यथार्थ मानव है । आइये, हम यथार्थ मानव बनें ।

---

# मनः स्थिति का भोजन पर प्रभाव—

(मनोभूमिकाओं द्वारा जीवन निर्माण)

---

जो भोजन हम खाते हैं केवल उसी के द्वारा हमारे शरीर का निर्माण नहीं होता प्रत्युत भोजन करते समय जो मनः स्थिति होती है. जैसे सूक्ष्म प्रभाव हमारा मन फेंकता है, जिन संस्कारों में हम भोजन ग्रहण करते हैं, वे ही भोजन के साथ साथ हमारे शरीर में बस जाते हैं और हमारे शरीर का निर्माण करते हैं। अतः भोजन करते समय आन्तरिक मनः स्थिति की स्वच्छता अतीव आवश्यक है । हमारे यहां आदि काल से भोजन करते समय की मनः स्थिति पर विशेष ध्यान दिया गया है ।

स्मरण रखिए, उत्तम से उत्तम भोजन दूषित मनः स्थिति से दूषित हो सकता है और लाभ के स्थान पर उलटा हानि कर सकता है। क्रोध, चिंता, चिड़चिड़ेपन से उच्च कोटि का पौष्टिक भोजन भी व्यर्थ हो जाता है। गुस्से में किया हुआ भोजन उचित रीति से नहीं पचता । इसी प्रकार चिंतित अवस्था का भोजन नसों में घाव उत्पन्न कर देता है । हमारी मुलायम नाड़ियां क्रमशः जीवन विहीन हो जाती हैं और उनकी शक्ति में भी बड़ा परिवर्तन हो जाता है। इसके विपरीत हास्य एवं प्रसन्नता शरीर तथा मन पर अपूर्व प्रभाव डालते हैं । अन्तःकरण की सुखद वृत्ति में किए हुए भोजन के साथ साथ हम प्रसन्नता की पौष्टिक भावनाएँ भी खाते हैं जिसका विद्युत सा प्रभाव पड़ता है । आनन्द ईश्वरीय गुण है, क्लेश, चिंता, उद्वेग आसुरी प्रवृत्तियां । इन दोनों प्रकार की भावनाओं के अनुसार ही हमारा भोजन दैवी या आसुरी गुणों से युक्त बनता है।

क्या तुमने देखा है कि हँसते हँसते दूध पीने वाला शिशु किस आसानी से अन्न खाकर पाचन कर सकता है, कैसा मोटा ताज़ा, सुडौल सुकोमल बनता जाता है. उसके मुख पर सरलता खेलती है, उसी प्रकार निर्दोष, निर्विकार वृत्ति से आनन्दपूर्वक किया हुआ भोजन भी हमारे शरीर में आनन्दमय स्वास्थ्य दे सकता है।

हमारे जीवन के विकास के साथ साथ गुप्त मन ( Sub-conscious mind ) का भी विकास चलता रहता है और यह हमारे शरीर में अज्ञातरूप से ऐसे ऐसे महत्त्वपूर्ण कार्य किया करता है जिसके बिना एक क्षण के लिए भी हमारा जीना संभव नहीं है। पोषण, रुधिराभिसरण, मल विसर्जन, भोजन के समय अङ्ग प्रत्यंग में नूतन शक्ति का उत्पादन आदि सभी व्यापार अन्तर्मन से होते हैं।

सुन्दर स्वास्थ्य के लिए पहली आवश्यक वस्तु है—सुन्दर विचार। उत्तम मनः स्थिति के बिना उन्नत स्वास्थ्य प्राप्त नहीं हो सकता। चिंतित मनः स्थिति से किए गए भोजन से यकृत बिगड़ता है और चित्त खिन्न एवं उदास रहता है। रक्त में भी दोष उत्पन्न हो जाता है और वह ज्ञान तन्तुओं और दिमाग़ में दूषित पदार्थ प्रवाहित करने लगता है। भय खाना, चिंता करना, और भोजन करते समय यह सोचना कि इससे नुक़सान न हो जाय—रोग को स्वयं आमन्त्रित करना है।

## भोजन के समय कैसे विचार होने चाहिए ?

भोजन आपकी उत्तम मनः स्थिति से अधिक सुस्वादु बन जावेगा। अतः आप अपने विचारों को उत्तमता की ओर मोड़िये। उनमें शुभत्व की तीव्र भावना प्रवाहित कीजिए। जब भोजन सामने आये तो आप शान्त हों स्थिर एवं प्रसन्न हों। स्मरण रखिए, भोजन करना पाप करना नहीं है। यह दिनचर्या का सबसे प्रधान काम है। अतः थोड़ी देर के लिए अपनी चिंताओं को भूल जाइये। दिन भर की दुःख तथा विपत्ति को एक कोने में रख दीजिए। क्रोध, चिड़चिड़ेपन, गुस्से को विस्मृत कर दीजिए। भोजन की थाली सामने आते ही थोड़ा सा जल लेकर उसके चारों ओर से फेर दीजिए और कुछ काल के लिए नेत्र मूंद कर मन में कहिए—"हे प्रभो यह भोजन आपको समर्पित है। इसे पवित्र, सुस्वादु, पौष्टिक एवं अमृतमय बना दीजिए। इसमें सब बढ़िया तत्त्वों का समावेश कीजिए।" नेत्र खोलने पर ऐसा सोचिए जैसे भगवान् ने भोग लगा लिया हो और आपकी आकांक्षा पूर्ण हो गई हो।

आपके प्रत्येक कौर के साथ उत्तम विचार भी भोजन के साथ मिश्रित होकर पहुंचने चाहिए। आप सोचते रहिए—"इस कौर के द्वारा मैं अपने शरीर में पौष्टिक तत्त्व पहुंचा रहा हूं। खूब चबा चबा कर मैं उससे अमृत का मजा ले रहा हूं। यह भोजन मेरे लिए अमृत का स्रोत है। मुझे अपरिमित प्रसन्नता व आनन्द आ रहा है। यह मुझे निरोगता, बल एवं शक्ति सम्पन्न कर रहा है। इससे मेरी प्राण शक्ति निरन्तर वृद्धि पर है।"

जब आप दूध पिएँ या पानी ही पिएँ, तो भी अपने विचारों का प्रवाह उत्कृष्टता की ओर लगाइये। आप मनमें सोचिए कि 'प्रत्येक घूंट से मैं अपार शक्ति पा रहा हूं. निरन्तर बलवान् बनता जा रहा हूं। इस दूध से मुझ में पुष्ट रक्त बनेगा और पवित्र अङ्ग उत्पन्न करेगा, इन्द्रियों को सशक्त बनावेगा। इसके द्वारा मेरे सत्व गुण की वृद्धि होगी। मैं शारीरिक रोगों से मुक्त हो जाऊँगा और अक्षय यौवन, अमित सुख एवं इन्द्रियों की शुद्धि प्राप्त करूंगा।"

पुष्ट संकेत ( Suggestions ) देने से भोजन के अणु अणु में अपार शक्ति उत्पन्न हो जाती है। अतः वह समय तो बड़े उत्सव का होना चाहिए। आपमें से प्रसन्नता फूटा पड़नी चाहिए। हँसी,

# दूसरों के मनोभावों को समझिए।

( व्यवहारिक मनोविज्ञान की समस्याएँ )

## प्रत्येक व्यक्ति आदर्श है—

क्या तुम्हें विदित है कि एक भारी चोर, पक्का डाकू, अनुभवी क़ातिल भी अपने आपको निंद्य नहीं समझता ? अपनी बुद्धि सभी को सर्वोत्कृष्ट लगती है। अपने किए हुए कार्य ही युक्ति संगत प्रतीत होते हैं। अपना दृष्टिकोण सब से अधिक श्रेयस्कर लगता है। एक क़ातिल क़त्ल करने के पश्चात् यह नहीं मानता कि उसने कोई बड़ा अपराध किया है। न चुराते समय चोर के मन में ही यह बात आती है कि वह कोई असुन्दर कार्य कर रहा है। क़ातिल की दृष्टि से क़त्ल करना, चोर की नज़र से चोरी करना युक्ति संगत है। हममें से प्रत्येक के कार्य हमारे निजी दृष्टिकोणों से सर्वोपरि हैं। दूसरे के काम में हम नुक्ताचीनी कर सकते हैं, सुन्दर सुन्दर आदर्श दिखा सकते हैं उत्तम पथ का निर्देश भी कर सकते हैं किन्तु हम यह मान लेते हैं कि हम स्वयं आदर्श हैं, जो कार्य करते हैं वह सब से उत्तम होता है, हमें छोड़ कर दूसरा उस कार्य को इतनी उत्कृष्टता, कलात्मकता, एवं परिपूर्णता से नहीं कर सकता जितनी उत्तमता से हमने किया है।

## स्वत्व की स्वयंभू वृत्ति—

हममें से प्रत्येक व्यक्ति अपने आपको आदर्श का नमूना मानता है। अपनी कमज़ोरियों, निर्बलताओं, क्षुद्रताओं में भी हम अपने आपको पूर्ण मानते है। हमें अपनी बुराइयां सुननी अप्रीतिकर लगती हैं। हम नहीं चाहते कि दूसरे उसका निर्देश करें या उसकी ओर हमारा ध्यान आकर्षित करें। हम नेत्र खोले रह कर भी निर्बलताओं की तरफ से आंखें नीची रखना चाहते हैं। अपनी सम्पत्ति, वस्त्र, घर, दृष्टिकोण, विचार, बुद्धि, श्रेष्ठता के लिए मनुष्य का स्वाभाविक पक्षपात है।

## स्पर्धा एवं ईर्षा का प्रवेश—

स्वत्व की जो स्वयंभू वृत्ति ( Instirct ) है, वह मानव स्वभाव की असहाय अवस्था की देन है, जब जीवन सैकड़ों कठिनाइयों, खतरों, से भरा था। जो वस्तु अपनी है उसकी रक्षा के लिए मनुष्य कुछ भी उठा नहीं रखता। स्वत्व, 'अहं' की स्वयंभू वृत्ति सभ्यता के उन्नत युग में स्वत्व की होड़, प्रतियोगिता, दूसरे को नीचा दिखाना, स्वयं अपने दृष्टिकोण को ही सर्वोपरि साबित करना के रूपों में प्रकट होकर सामाजिक वैषम्य का प्रधान कारण बन गई है। स्पर्धा एवं ईर्षा अहं वृत्ति में रुकावट आने से समाज में प्रविष्ट हुए है।

समाज में आज ईर्षा है तो इसी लिए कि हम एक दूसरे के दृष्टिकोणों को नहीं समझना चाहते और यदि समझते भी हैं तो उसके अनुसार कार्य नहीं करते। जो व्यक्ति दूसरे के मनोभावों के मार्ग

---

मज़ाक, आनन्दोत्पादक खबरें, चित्ताकर्षक दृश्य, उत्तम प्रकार के पुरुषों की चर्चा, मज़ेदार वार्त्तालाप में मग्न रहना चाहिए। मित्रों के साथ भोजन करने से उसमें दूना स्वाद आ जाता है। अतः भोजन करते समय हृदयों में जितने भी कल्याणकारी, स्वास्थ्यप्रद, उत्तम उत्तम पुष्टिकर भाव भर दिये जांय उतना ही अच्छा है। स्मरण रखिए, उत्तम मनोभावों से एक आध्यात्म शक्ति निकल कर भोजन को अधिक पौष्टिक बनाती है। जिस विचार से आप भोजन को स्पर्श करेंगे उसमें वैसे ही गुणों का समावेश हो जावेगा। अपनी टूटी फूटी झोंपड़ी में रूखी सूखी रोटी खाकर आप मनोभावों द्वारा उत्तम स्वास्थ्य प्राप्त कर सकते हैं।

में रुकावट डालता है, वही ईर्षा का कारण बनता है। समाज में फैले हुए अनेक झगड़ों, समस्याओं, एवं प्रतियोगिताओं के अन्तर में एक दूसरे के मनोभावों का विभ्रम है। परदोष दर्शन में भी अपने स्वत्वों को दृढ़ बनाने, उन्हें अप्रत्यक्ष रूप से ( Indirectly ) दूसरे से ऊँचा सिद्ध करने का प्रपंच है।

### आलोचना स्वत्व को ठेस पहुंचाती है—

दैनिक जीवन में आलोचना से जो भयंकर कृत्य होते हैं उनसे प्रत्येक व्यक्ति थोड़ा बहुत परिचित है। माता पिता अपने छोटे शिशुओं की आलोचना करते नहीं थकते। मालिक नौकर की शिकायत करते नहीं अघाता। अध्यापक विद्यार्थियों की टीका टिप्पणी करता है। दूकानदार ग्राहकों की मूर्खता के ढाल पीटता है। वक्ता सुनने वाले की नासमझी पर आठ आठ आंसू रोता है। जज खूनी, कातिल, चोरों की अज्ञानता पर क्षोभ प्रकट करता है। हास्पिटल में मरीजों की दशा देखता हुआ डाक्टर रोगियों की कम अक्ली का उपहास बनाता है। पागलखाने का रक्षक अनेक पागलों को देख देख कर सोचता है—"काश, ये व्यक्ति अपने दृष्टिकोणों में परिवर्तन कर पाते ?" किन्तु हम यह नहीं सोचते कि छोटे छोटे शिशु, नौकर, ग्राहक, श्रोतागण, खूनी, कातिल, रोगी, पागल— कोई भी अपने आप को न मूर्ख समझता है और न इस बात को स्वीकार करने के लिए ही प्रस्तुत है, वह जैसा भी है, अपने आदर्शों से सर्वोत्तम है। उसके मनोराज्य में सब से ऊँचे जीवन का जो चित्र वर्तमान है उसके अनुसार वह अपना आत्म निर्माण कर रहा है।

### मनोभाव व्यक्तिगत हैं—

प्रत्येक का मनोभाव आन्तरीय है। उसे आप देख नहीं सकते। वह व्यक्तिगत ( Personal ) है। उसमें दूसरे का हिस्सा नहीं। भाव मनमें ( हृदय में नहीं जैसा कि हम समझा करते हैं ) उत्पन्न होते हैं और भिन्न भिन्न व्यक्ति में पृथक् पृथक् होते हैं। एक ही वस्तु देख कर उसका प्रभाव भिन्न भिन्न व्यक्तियों पर भिन्न पड़ सकता है। यदि हम सूर्य्यास्त का सुन्दर दृश्य देखें तो हमारे मनोभाव एक दूसरे दर्शक से भिन्न होंगे, एक कवि उसे कुछ और ही समझेगा। किसान, मजदूर उसे किसी और ही रङ्ग में लेंगे। सुन्दर चित्र, मनोहर प्राकृतिक दृश्य, गाना इस सभी में कुछ के मनोभाव कुछ होंगे कुछ के दूसरे। एक हब्शी भी अपने विचित्र रङ्ग, रूप, पोशाक, आभूषणों को सर्वोत्कृष्ट समझता है। सभ्य समाज नित नया फैशन बदलता है। इनमें से प्रत्येक अपने आनन्द को, अपने आदर्श को, अपने दृष्टिकोण को सबसे ऊँचा समझता है और दूसरे को मूर्ख ठहरा कर अपने "अहं" भाव को प्रकट करता है।

### संसार मनोभावों का बना है:—

"दुनियां बहुत बुरी है। जमाना बहुत खराब है ईमानदारी का युग चला गया, चारों ओर बेईमानी छाई हुई है। सब लोग धोखेबाज हैं, धर्म धरती पर से उठ गया।"—ऐसी उक्तियां जो व्यक्ति पुनः पुनः उच्चारण करता है समझ लीजिए कि वह स्वयं धोखेबाज है, बेईमान है। उसके मनोभावों का ही यह प्रकाश है जो उसके संसार का निर्माण पल पल में कर रहा है। उसके मनोभाव ही चारों ओर इकट्ठे हो गए हैं। जो आदमी यह कहा करता है कि "दुनियां में कुछ काम नहीं है बेकारी का बाजार गर्म है, उद्योग धन्धे उठ गए, अच्छे काम नहीं मिलते," समझ लीजिए कि इसकी अयोग्यता इसके चेहरे पर छाई है और जहां यह जाता है अपने मनोभावों के दर्पण में ही सब वस्तुएँ निहारा करता है।

क्रोधी व्यक्ति जहां जायगा, कोई न कोई लड़ने वाला उसे मिल ही जायगा, घृणा करने वाले को

कोई न कोई घृणित व्यक्ति मिलही जायगा। अन्यायी मनुष्य को सब लोग बड़े बेहूदे, असभ्य और दण्ड देने योग्य दिखाई पड़ते हैं।

वास्तव में होता यह है कि अपनी मनोभावनाओं (Feelings) को मनुष्य अपने सामने वालों पर थोप देता है और उन्हें वैसा ही समझता है जैसा वह स्वयं है। जिसे दुनियां स्वार्थी कपटी, गंदी, दुखमय, कलुषित, दुर्गुणी, असभ्य दिखाई पड़ती है समझ लीजिए कि इसके अन्तर में स्वयं दुर्गुणों, कमजोरियों, न्यूनताओं का बाहुल्य है।

संसार एक अत्यन्त विशाल दर्पण है जिसमें हम नित्य प्रति के जीवन में अपनी भावनाओं की प्रतिकृति देखा करते हैं। जो व्यक्ति जैसा है उसके लिए इस सृष्टि में से वैसे ही तत्व आकर्षित होकर प्रकट हो जाते हैं। सत्ययुगी आत्माएँ हर युग में रहती हैं और उनके पास सदैव सतयुग बरतता रहता है।"

## दूसरों के मनोभावों को बरतिए—

आप जिस स्थिति, जिस कार्य, या जिस क्षेत्र में हों, अपने से काम पड़ने वाले व्यक्तियों के स्वभावों का अच्छी तरह अध्ययन कीजिए, उनके आदर्शों, दृष्टिकोणों, सम्बन्धों, भावों, से परिचय प्राप्त कीजिए। उनके प्रत्येक कार्य को गहरी अन्तर्दृष्टि से निहारिये, और उनका मनोविश्लेषण कीजिए।

आप अपने आप से पूछिये—आखिर यह व्यक्ति चाहता क्या है? इसके दिमाग में वस्तुओं का आदर्श स्वरूप कैसा है? यह किस किस चीज से नफरत करता है और किस किस को उत्तम मानता है? अपने नौकरों से यह कैसा काम लेना चाहता है? इसकी प्रिय वस्तुएँ (Hobbies) क्या हैं? इसके अन्तःकरण में सौंदर्य का क्या परिमाण (Standard) है?

आचार-क्षोभ (Moral emotions) का संबंध मनुष्य की नित्यप्रति की क्रियाओं से होता है और उन्हीं के सूक्ष्म अध्ययन से अच्छाई या बुराई का निर्धारण किया जा सकता है। आचार क्षोभ हमारे नित्यप्रति के कार्यों के न्यायाधीश हैं। उन्हीं के अवलोकन से हमें व्यक्तियों के स्वभावों का ज्ञान प्राप्त होता है। हमारी जांच जितनी अच्छी होगी। उतने ही अंशों में हम समाज से हिलमिल कर निबाह कर सकेंगे।

आप किसी व्यक्ति से उसके निजी आदर्शों के विषय में बातचीत कीजिए और उसके मनोभावों के प्रति सहानुभूति दिखाइये, उसके विचारों की श्रेष्ठता जताइये। बस, आप उसे अपने वश में कर सकेंगे। वह आपसे अपने विषय में बातें करते नहीं थकेगा।

यदि तुम किसी को नाराज़ कर अपना शत्रु बनाना चाहते हो तो उसके मनोभावों को कुचल दो; उसकी बातें काटो और अपनी ही अपनी हाँको।

अतएव जब तुम समाज में दूसरे व्यक्तियों से वार्तालाप या व्यवहार करने निकलो तो यह स्मरण रक्खो कि तुम मिट्टी के पुतलों से बातें नहीं कर रहे हो प्रत्युत ऐसे मनुष्यों से व्यवहार कर रहे हो जिनमें भावों का प्रभुत्व है। भाव के उस जलाशय में तुम्हारी प्रत्येक बात अद्भुत लहरें उत्पन्न करती हैं। भिन्न भिन्न क्षोभ उठ कर मन के समरांगण में युद्ध करते हैं। मध्य में ऐसी मनः स्थितियां उत्पन्न हो जाती हैं जिनके कारण कार्यशैली कुछ और की और बन जाती है।

## दूसरों के गर्व की रक्षा कीजिए—

स्मरण रखिए, प्रत्येक व्यक्ति अपने गर्व-चूर्ण पर लड़ने मरने को तैयार हो सकता है। गर्व (Pride) ऐसी ही प्रिय भावना है। हम प्राण देकर भी इसकी रक्षा करना चाहते हैं। दूसरे के सामने अपनी हेठी नहीं कराना चाहते। हमारी यही धारणा रहती है कि हमारा मस्तक ऊँचा रहे।

कोई हमारी ओर उँगली न उठा सके। हमारी कमजोरियों, या न्यूनताओं की चर्चा न करे।

उदाहरणार्थ, आपकी पत्नी आज स्वादिष्ट भोजन नहीं बना सकी। मिर्च ज्यादा पड़ गई हैं, दाल कच्ची है। रोटियां भी जल गई हैं। आप उससे यह न कहिए कि तुम्हें भोजन बनाना नहीं आता। तुम दाल रोटी तक बनाना नहीं सीख सकीं। इसके स्थान पर आप कहिए कि "आपके भोजन का स्टैन्डर्ड उतना ऊँचा नहीं है जितना नित्य रहता है। तुम्हारे हाथ के भोजन के सामने हमें दूसरे के हाथ का अच्छा नहीं लगता। इस कला में तुम्हारे समान निपुण बहुत कम हैं।" इस प्रकार के वाक्यों से पत्नी के गर्व की रक्षा हो सकेगी और वह आपको प्रसन्न करने के लिए ऊँचे स्टैन्डर्ड का भोजन तैयार किया करेगी।

दूसरे के गर्व को उत्तेजना देने से, बढ़ावा, तारीफ़ करने से, मिथ्या घमंड बढ़ता है और प्रत्येक व्यक्ति प्रसन्न होता है। बड़े से बड़ा और छोटे से छोटा व्यक्ति अपने गर्व की रक्षा करना चाहता है। दूसरों की नजरों में अपना अतिशयोक्ति पूर्ण स्वरूप देखने को लालायित रहता है।

## यदि आप अध्यापक हैं तो—

विद्यार्थियों के गर्व की रक्षा कीजिए। सीधी साधी भाषा में उनकी त्रुटियां बतलाने के स्थान पर इस प्रकार घुमा फिरा कर आलोचना कीजिए कि उन्हें यह प्रतीत न हो कि आप उनको मान हानि कर रहे हैं। एक मित्र की तरह कहना प्रारम्भ कीजिए। अपने शिष्यों के दिल को पकड़ लीजिए। उनकी गहराइयों में प्रवेश प्राप्त कीजिए। यदि आपने एक बार उनका विश्वास (Confidence) प्राप्त कर लिया, तो आप उन पर खूब अच्छी तरह राज्य कर सकते हैं। विश्वास तब मिलेगा जब आप उनके मिथ्या गर्व को फुलाते रहेंगे। उनके सामने उन्हीं का अतिरंजित स्वरूप प्रस्तुत कर सकेंगे।

## यदि आप पत्नी हैं तो—

स्मरण रखिए कि स्त्री जितनी ही कोमल, सौम्य, मधुर हो वह पुरुष को उतनी ही प्रिय लगती है। जो स्त्री पति के मनोभावों की रक्षा करती है, किसी प्रकार उसकी पौरुष श्रेष्ठता के गर्व को फुला देती है उसका बढ़ा चढ़ा रूप दिखाती है, अपने आप एक ऐसा दर्पण बन जाती है जिसमें पति अपने पुरुषोचित गुणों का पूर्ण विकास पाता है—वही स्त्री पुरुष को पसन्द आती है। पुरुष की यह इच्छा होती है कि उसकी पत्नी उसकी श्रेष्ठता जताये, साहसिक कार्यों की प्रशंसा करे, विफलताओं में समवेदना प्रकट करे, मिथ्या गर्व को उत्तेजित करती रहे, अपनी डींग न मारे। पति पत्नि को अपने से नीची ही देखना पसन्द करता है क्यों कि ऊँचा उठने पर उसकी पौरुष श्रेष्ठता, गर्व, अहंभाव को धब्बा लगता है।

## यदि आप पति हैं तो—

यह याद रखिए कि पत्नि की कुशलता, सौंदर्य, गृह निपुणता, प्रेम की तारीफ़ करना, स्तुत्य वाक्यों का प्रयोग, बढ़ावा देना, चाटुकारिता खुशामद करना, बातें बनाना पति के लिए वैसा ही आवश्यक है जैसा जीवन के लिए श्वास। इससे पत्नि के गर्व की रक्षा होती है। वह अपनी श्रेष्ठता का प्रतिबिम्ब देखती है। अतः यदि तुम सफल नायक बनना चाहते हो तो यह स्मरण रक्खो कि बढ़ावा प्रशंसा और बातें बनाना स्त्री जीवन के लिए सर्व श्रेष्ठ प्रोत्साहक एवं तीव्र उत्तेजक हैं। पत्नि की खूबियों का अतिश्योक्तिमय वर्णन करो, उसका आदर करो, उसके कार्यों पर अपनी प्रसन्नता प्रकट करो और इन सब के लिए उसकी अकारण झूठी प्रशंसा भी करो।

## यदि आप दूकानदार हैं तो—

अपने ग्राहकों के गर्वों की रक्षा कीजिए। "आपके लिए तो यह कपड़ा ठीक है, यह तो निम्न श्रेणी वालों के लिए है।" ऐसा कहने से ग्राहक का गर्व बढ़ता है और आवेश में आकर वह बढ़िया वस्तु खरीद लेता है। मुँह मांगे दाम दे जाता है। उसके मनोभावों को जानने की कोशिश कीजिए फिर उसी के अनुसार उसकी भावनाओं को उत्तेजना प्रदान कीजिए। अपने माल की इस प्रकार प्रशंसा कीजिए कि ग्राहक उसे समझ न सके। उसकी भावनाएँ यकायक चीज लेने को चंचल हो उठें। और वस्तु खरीद लेने पर ही उसकी तसल्ली हो। यदि आप ग्राहक से लड़ने को प्रस्तुत हो जायँगे, या उसे छोटा समझ कर उसके गर्व को उत्तेजित नहीं करेंगे तो वह क्षुब्ध होकर चला जायगा और शायद गालियां भी सुना जाय। दूकानदार को अति कोमल, विनम्र, सौम्य भाषा का प्रयोग करना चाहिए। प्रत्येक पुरुष अपनी महत्ता चाहता है, गर्व की रक्षा के लिए तुला रहता है। अतः उसकी इन्द्रियों को, भावों को भड़काइये और बतलाइये कि बिना उस वस्तु के उसका कार्य नहीं चल सकता. न पूर्ण तुष्टि ही हो सकती है।

## यदि आप उपदेशक या वक्ता हैं तो—

श्रोताओं की भावनाओं को उत्तेजित कीजिए। भाव समुद्र में तूफ़ान ला दीजिए। सुनने वालों की विचारशक्ति को दबा कर भावनाओं को भड़काइये। सामयिक रुचिकर बातें नवीन ढङ्ग से कहिए। उत्तेजक की अधिकता (Intensity) का प्रभाव विकारों (Feelings) पर बहुत पड़ता है। साधारण उत्तेजन से हमारे ज्ञान तन्तुओं को जो कार्य करना पड़ता है प्रायः उसकी निर्बलता के कारण प्रभाव भी साधारण पड़ता है। दूसरे उत्तेजन के आकार का प्रभाव भी विकारों पर पड़ता है। उत्तेजन के परिवर्तन, दूसरे प्रकार की भावना के उद्रेक से हमारे विकार शीघ्र उत्तेजित हो उठते हैं। व्याख्यान देते समय श्रोताओं को हँसाइये, गंभीर बनाइये, कभी भाव से उन्मत्त कर दीजिए। श्रोता उसी की बातें पसन्द करते हैं जो उनके मिथ्या गर्व को फुला देता है। अपने आपको एक ऐसा दर्पण बनाइये जिसमें श्रोतागण अपना बढ़ा चढ़ा रूप उसमें देख सकें।

## यदि आप माता पिता हैं तो—

बालकों के गर्व को प्रेरणा दीजिए। पिता का बालक के संस्कार निर्माण में बड़ा गहन हाथ होता है। बालक के अज्ञान में संस्कार की ओर शक्ति देने वाली प्रेरणा चिंता ही उत्पन्न करता है। "पिता मेरे लिए आदर्श हो।"—बालक की यह कामना उसमें बड़ी प्रबल होती है। आचार निर्माण में एक बात जो माता पिता को दृष्टिगत रखनी चाहिए वह यह है कि आचरण करते समय, या कोई आज्ञा देते समय बालक के गर्व को हानि न पहुंचे। आचार गतियां तभी स्वस्थ मन से होती हैं जब बालक के आत्म सम्मान को विकसित होने का प्रचुर अवसर दिया जाता है। बच्चों की मारकूट करना, कटु शब्द बोलना, उनका बार बार अपमान करना मानसिक विश्वास में बड़ा अहितकर है।

घर में स्कूल होना चाहिए और स्कूल में घर—यह सिद्धान्त नव-शिक्षण का एक प्रमुख आधार है। बालक के मानसिक विकास में घर का बड़ा और प्रथम स्थान है। अतः हमें शिशु के साथ एक सभ्य पुरुष का सा व्यवहार करना चाहिए। गालियों द्वारा जो प्रेम व्यक्त होता है उसके मूल तक में घृणा, रोष, ऊब एवं प्रतिहिंसा है। बालक की अन्तरात्मा गालिएँ, डाट, फटकारें पसन्द नहीं करती। वह अन्दर ही अन्दर रुष्ट होकर प्रतिशोध सा लेना चाहती है।

बालक की जिज्ञासा को, उनकी मनोभावनाओं,

# व्यवहारिक सफलता का रहस्य।

( दैनिक मनोविज्ञान पर एक मनोरंजक लेख )

---

## दूसरों में दिलचस्पी लीजिए—

दैनिक जीवन में प्रभावशाली बनने के लिए आपको दूसरों के कार्यों में, उनकी प्रिय वस्तुओं में, उनके बाल-बच्चों में दिलचस्पी ( Interest ) लेनी चाहिए। दूसरों की दुनियां में प्रवेश कीजिए एक दुनियां तो यह है जिसमें हम नित्य विचरण करते हैं, नाना प्रकार के व्यक्तियों से निज सम्बन्ध स्थापित करते हैं, सुख दुःख भोगते हैं। यह दुनियां तो सभी लोगों के लिए एक है किन्तु इसके अतिरिक्त प्रत्येक व्यक्ति की एक भिन्न दुनियां होती है, जहां वही व्यक्ति जब चाहता है प्रवेश कर जाता है। दूसरे को प्रवेश नहीं करने देता।

## प्रत्येक की दुनियां पृथक् है—

यह दुनियां उस व्यक्ति की इच्छाओं, मनोकांक्षाओं, एवं भावनाओं के सुनहरे तारों से विनिर्मित है। इस बाहरी दुनियाँ में जो इच्छाएँ अपूर्ण, अतृप्त रहती हैं वे हताश होकर इसी संसार में निवास करती हैं। ये कभी कभी अव्यक्त रूप से स्वप्न तथा जाग्रत स्वप्न में पूर्ण होती हैं। रात्रि में स्वप्न तो देखते ही हैं किन्तु जाग्रतावस्था में भी सपना देखा करते हैं। इन कुचली हुई इच्छाओं का विस्तृत विवरण मेरी नवीन पुस्तक "हमें स्वप्न क्यों दीखते हैं?" में मिल सकता है। इन्हीं हृदय की भावना में बहकर एक भिखमंगा अपनी दुनियां का राजा बन कर आनन्द में विचरता है।

## कौशल ( Tactfully ) से काम लीजिए—

व्यवहारिक सफलता के लिए आप दूसरों की दुनियां में प्रवेश कीजिए, किन्तु यह कार्य चुपके चुपके हो सकेगा। यदि दूसरा यह भाँप जाय कि आप उसके गूढ़ रहस्यों को जानना चाहते हैं तो वह सतर्क हो जायगा तथा अपनी दुनियां के किवाड़ बन्द कर लेगा। प्रशंसा तथा सहानुभूति के मरहम से आप बखूबी दूसरों की दुनियां में प्रवेश पा सकेंगे।

मैंने स्वयं ये दोनों गुर काम में लिए हैं। मैं गन्दे से गन्दे मूर्ख, बदमाश, लंपट से लेकर बड़े से बड़े मनुष्य की दुनियां में इन्हीं दोनों सूत्रों से प्रवेश कर सका हूं। पतितों को सुधारने के लिए इन दोनों—प्रशंसा तथा सहानुभूति—से उत्तम औषधि दूसरी नहीं है।

कभी कभी खुशामद से भी यही कार्य निकलता है। तारीफ करना, स्तुत्य वाक्य कहना, बढ़ावा देना, चाटुकारिता, बातें बनाना—ये सभी प्रशंसा के अन्तर्गत आते हैं। थोड़े थोड़े अंश में समय एवं मौक़ा देख कर इन शस्त्रों का प्रयोग करना बुरा नहीं है।

लोगों की खूबियों का बयान करो, उनका सहानुभूति पूर्ण आदर करो, उनके दुःखों पर हार्दिक दुःख प्रकट करो, दिलासा दो. उनकी सफलताओं पर प्रसन्नता प्रकट करो। यह समझ कर चुप न रह जाओ कि हमने सुन लिया यही पर्याप्त है।

## दूसरे का दृष्टिकोण समझने का प्रयत्न कीजिए—

दूसरा व्यक्ति किस बात में शौक लेता है, उसका प्रिय विषय क्या है? वह किस वस्तु को सर्वोत्तम

---

हसरतों को मत कुचलिए। पग पग पर बालक को मत पीटिये, बल्कि निर्भय एवं निश्चिन्त रहने दीजिए। माता पिता का सच्चा आनन्द बालक का पोषण कर, उसका उचित मानसिक विकास करके मिलना चाहिए उसे पददलित कर या दबा कर नहीं। बालक के दृष्टिकोण को समझिए और फिर बुद्धिमानी से उसमें परिवर्तन कीजिए, बर्बरता से नहीं।

---

गिनता है? उसके दृष्टिकोण से कौन चीज़ दुनियां में अनुपम है? यह मालूम करने की निरन्तर चेष्टा करो यह उस व्यक्ति का बटन (Pressure Point) है जैसे बिजली का बटन दबाने से चारों ओर प्रकाश होता है, वैसे ही इस विषय पर बात करने से वह व्यक्ति अधिकाधिक प्रसन्न होता है और घन्टों बातें करना चाहता है। स्मरण रक्खो, प्रत्येक स्त्री पुरुष की भिन्न भिन्न रुचि, भिन्न भिन्न इच्छाएँ और अपना विशेष दृष्टिकोण होता है। दूसरों के विषय में अधिक से अधिक भेदी बनो। उनकी गुप्त बातें, मानसिक कथा, इच्छाएँ जितनी अधिक मालूम हो जांय, उत्तम हैं।

## अपने इरादों को छिपाइये—

गुप्त मार्मिकपन एक अति आवश्यक गुण है जिसके द्वारा अन्य व्यक्ति तुम्हें जानने के लिए उत्सुक हो उठता है। तुम अन्त में क्या करना चाहते हो, यह प्रकट मत होने दो। जो व्यक्ति अपने भेदों को खोलता फिरता है उसमें अन्य लोगों को मज़ा नहीं आता। उनका महत्त्व कम हो जाता है और उनकी छछोरों में गड़ना होने लगती है। दूसरे की बातें पूरी पूरी तरह सुनो किन्तु अपनी बातें उतनी ही कहो जितनी ज़रूरी हैं। अधिक मत खुलो। जो व्यक्ति कम बोलते हैं, सारगर्भित बोलते हैं, केवल आवश्यक वार्त्तालाप करते हैं, उनका दूसरों पर प्रभाव पड़ता है।

## मध्यम स्थिति अपनाइये—

अपने को मध्य की स्थिति में रख कर आप दूसरे व्यक्ति के अहं भाव की रक्षा कर सकते हैं। न तो सिद्ध पुरुष बनने का ढोंग करो और न नीच होने की घोषणा ही करते फिरो। इसका आशय यह है कि न तो अपनी बल-बुद्धि विद्या की शेखी ही बघारो और न तुच्छता ही प्रकट करो। साधारणत: न तो इतना प्रेम ही प्रकट करो कि उसके गले से ही लिपट जाओ और न द्वेष, कटुता, या रुखाई का ही व्यवहार करो। मध्यम श्रेणी के भले, आदमियों की तरह के वस्त्र पहिनो। ऐसा करने से दूसरे तुम्हारे ऊपर शक या शुबा न करेंगे और अपने भेद खोलते रहेंगे।

## "नमस्ते" स्वीकार करना न भूलिये—

जब कोई आपको "नमस्ते", "प्रणाम" या "सलाम" करता है, तो उसका अभिप्राय आपके प्रति अपना सन्मान प्रकट करना है। वह आपके बड़प्पन को अव्यक्तरूप से स्वीकार करता है और यह भी चाहता है कि आप उस पर कृपा दृष्टि रक्खें। 'नमस्ते" स्वीकार करने से "नमस्ते" करने वाले को यह संतोष हो जाता है कि आपने उसके सन्मान को स्वीकार कर लिया है। "नमस्ते" का प्रत्युत्तर न देने से करने वाले के मन: प्रदेश में विक्षोभ उत्पन्न होता है और वह समझता है कि आपने उसके गर्व को कुचल डाला है। अत: सदा सर्वदा प्रसन्न मुख से "नमस्ते" स्वीकार कीजिए। और यदि संभव हो सके तो करने वाले से दो चार बातें भी कीजिए।

"नमस्ते" करने से करने वाला कुछ नीचा तो बनता है किन्तु दूसरे व्यक्ति के मिथ्या गर्व को फुला देता है। यह प्रशंसा का एक हलका सा स्वरूप है अतः उत्तम प्रभाव डालने के लिए यह एक सहज उपाय है।

## अपने नाम की ममता—

सम्पूर्ण भाषा में अपने अपने नाम के अक्षर हम सबको अत्यन्त प्रिय हैं। अपने नाम से हमें असाधारण ममत्व है। नाम के आगे लगे हुए अक्षर "श्रीयुत", "श्रीमान", "लाला", "बाबू" इत्यादि भी इस दशा में बड़े महत्व के हैं। हम चाहते हैं कि हमारा नाम अमर रहे, बार बार लोगों की ज़बान पर नृत्य करें, लोग उसे आदर से लें, व्यापार, शिक्षा, सर्विस के क्षेत्रों में, नेताओं, एक्सपर्टों, चित्रकारों, गायकों में हम परिगणित किए

जाँय, हमारा नाम छापा जाय और वह बारम्बार लोगों की नजरों से गुजरे। अभिनेताओं तथा डाइरेक्टरों को पूर्ण विज्ञापन में सब से आकर्षक चीज अपना नाम ही लगता है। हममें से प्रत्येक अपने नाम को सर्वोच्च स्थान प्रदान करना चाहता है। अतः दूसरों को प्रभावित करने के लिए आप दूसरों के नाम की प्रतिष्ठा कीजिए।

## दूसरे को महत्ता प्रदान कीजिए—

प्रत्येक व्यक्ति आपकी बनिस्बत किसी विशेष दिशा में बढ़ा-चढ़ा है। आपका ज्ञान एक विशेष दिशा में भले ही गहरा हो किन्तु जीवन के प्रत्येक पहलू को आप उतनी गहराई से नहीं समझते जितना अन्य व्यक्ति। अन्य दूसरों से बातें करते समय उन्हें थोड़ी सी महत्ता प्रदान कीजिए महत्ता से दूसरा फूल कर कुप्पा हो जाता है। उसका मिथ्या गर्व भड़क उठता है, वह अपने आप की महानता से अभिभूत हो उठता है। कोई ऐसा विषय ढूढ़िये जिसमें दूसरा व्यक्ति आपकी अपेक्षा अधिक ज्ञान रखता हो, फिर उससे उसी दिशा में शिक्षा ग्रहण कीजिए। उसे अपने प्रिय विषय पर बातें करने के लिए उत्तेजित कीजिए। आपको यह मालूम करके आश्चर्य होगा कि वह मिथ्या अभिमान में मत्त होकर घन्टों बातें करता रहेगा और उस सबका श्रेय आपको मिलेगा।

## सेवा मय जीवन बिताइये—

यदि तुम्हारे करने से किसी का भला होता है, तो यह मत सोचो कि हम अमुक व्यक्ति की सहायता क्यों करें। इसकी शिफारिश करने से हमें क्या लाभ होगा। तुम उससे बदले में कुछ मत चाहो। तुम्हारी भलाई की छाप उसके अन्तःकरण में चित्रित हो जावेगी निश्चय रखिए, आपकी इन सहायताओं का बदला इस जगत् में न सही, दूसरे जगत् में अवश्य प्राप्त होगा। स्मरण रखिए, मैत्री भी धन के समान ही मूल्यवान् है। जिससे जितने अधिक मित्र होते हैं उसे उतना ही, अधिक आनन्द मिलता है। यदि किसी मित्र को कठिनाई मे देखो तो तुमसे जितना बन सके उसकी सहायता करो। इस प्रकार के व्यवहार से तुम्हारे हृदय में जितना आनन्द होगा, वैसा आनन्द अकेले (Reserved) जीवन व्यतीत करने में कदापि न होगा।

इस प्रकार व्यवहार कुशल होना हमारा सर्वोत्कृष्ट कार्य है व्यवहार कुशलता का सबसे सरल मार्ग यह है कि तुम जो कुछ भी करना, कहना, या बरतना चाहते हो सब अपने परम पिता परमेश्वर की ही प्रेरणा से करो।

---

# कल्पना शक्ति साक्षात् कल्पलता है?

(कल्पना की मनोवैज्ञानिक विश्लेषण)

मानसिक शक्तियों में कल्पना का स्थान अत्यन्त प्रमुख है। इसी अद्‌भुत शक्ति के बल पर संसार के इतिहास में महान् कार्य हुए हैं, कलाकारों, कवियों, नाट्यकारों, दार्शनिक, तत्त्वज्ञानियों ने इसीके बल पर अपनी कला का निर्माण तथा सृष्टि के नाना रहस्यों का उद्‌घाटन किया है। इसी के द्वारा मनुष्य अपना लक्ष्य स्थिर करता, तथा उज्ज्वल भविष्य को निहारता है।

## कल्पना का भला बुरा उपयोग—

कल्पना के द्वारा हम अपने भविष्य का निर्माण कर सकते हैं साथ ही नाना प्रकार की व्याधियों, पाप और दुःखकी आँधियों, कायरता, निरुत्साह, उदासीनता, ग्लानि, तथा रोगों की बात भी सोच सकते हैं। कुकल्पना शैतान से भी बढ़ कर है। मनकी यह अशुभ वृत्ति—आयु, सामर्थ्य, मनोबल की

सर्वदा हानि करने वाली है। इसके विपरीत यदि कल्पना का ठीक प्रकार विकास एवं उपयोग किया जाय तो यह सब दुःखों, व्याधियों, अन्तरस्थ दीनता, अहं की भावना, का नाश कर मुक्ति मन्दिर में प्रवेश करा सकती है। यह हमारी रक्षा करने वाली, सद्प्रेरणा, अभ्यन्तर स्वतन्त्रता देने वाली है। कल्पना शक्ति के दुरुपयोग से पूर्ण स्वस्थ मनुष्य तक क्षय को प्राप्त हो सकता है तथा सदुपयोग से मरण शय्या पर पड़ा हुआ रोगी भी आरोग्य प्राप्त कर सकता है। मन की स्थिति सुधारने, स्थिरता कायम रखने, नवीन रचनात्मक कार्य करने में कल्पना से अत्यधिक सहायता मिलती है क्यों कि इसका राज्य भूत, भविष्यत् एवं वर्तमान तीनों पर समान रूप से है।

## कल्पना की कार्य प्रणाली—विच्छेद।

कल्पना में बड़ी विचित्रता है। यह तमाम ज्ञानतत्त्व को तोड़ मरोड़ कर छिन्न भिन्न कर देती है फिर उन छिन्न भिन्न तत्त्वों को इस प्रणाली से मिलाती है कि बिल्कुल नवीन वस्तु का निर्माण हो हो जाता है। "नए नए स्वरूप, वस्तुएँ, संगठन, जोड़, तोड़ मरोड़ करते रहना कल्पना का कार्य है। कविगण तथा वैज्ञानिक इसी शक्ति से कविता के चित्र, महाकाव्य, उपन्यास इत्यादि रचते तथा नया आविष्कार करते हैं। विच्छेद (Dissolution) से कार्यारम्भ कर यह पुनर्निर्माण कर कार्य करती है स्मृति इसकी प्रिय सहेली है। स्मृति में संचितज्ञान राशि से यह नवीन ज्ञान प्राप्ति में सहायता देती है। स्मृति पर भी कल्पना अपना प्रभाव डालती है।

## कल्पना के तीन स्वरूप—

कल्पना तीन रूपों में हमारे दैनिक जीवन में प्रभाव डालती है। जैसे—

१. विधायक कल्पना या ज्ञानात्मक कल्पना— इसके द्वारा जब हम कोई बात पढ़ते हैं, वैसा ही चित्र मनोजगत् में खिंचता है। जब तक मन में उसका चित्र अंकित न हो, ज्ञान प्राप्त न होगा। अतः वास्तविक ज्ञान प्राप्ति में इसका प्रमुख हाथ है। जो तथ्य समझे जांय उनकी प्रतिकृति (Image) भी मस्तिष्क में खींच लिया जाय।

२. उत्पादक कल्पना या प्रयोगिक कल्पना— इसका प्रयोग नित्य हम करते हैं। पूर्व संचित स्मृति के बल पर नई चीज जानते हैं, रेल, तार, मोटर, पुस्तकें, कला, चित्रकारी इसी के चमत्कार हैं।

३. आदर्श या ललित (Acsthetic) कल्पना— इसके द्वारा हम सबसे उत्कृष्ट अत्युत्तम आदर्श खड़े करते हैं। धर्म, ईश्वर, देवी देवता, स्वर्ग, इत्यादि इसी कल्पना के उच्चतम शिखर हैं। भावों का प्रभाव कल्पना पर पड़ता है और मनोभावों के अनुसार ही आदर्शों की सृष्टि होती है। मनुष्य के अन्तर्जगत् में स्थित भलाई, सत्यता एवं सौन्दर्य से हमारे आदर्श बनते हैं। सत्य, शिव, एवं सुन्दर का अति उच्च स्वरूप आदर्श है।

## शरीर पर कल्पना का प्रभाव—

श्रीयुत कुन्दनलाल ने प्रो० Buell के एक प्रयोग का वर्णन अपने ग्रन्थ में इस प्रकार किया है। इससे प्रतीत होता है कि शरीर पर कल्पना का राज्य है—

" फ्रांन्स में एक दोषी का प्राण दंड मिला। कारागार में डाक्टरों ने उसके नेत्रों पर पट्टी बांध कर एक तख्ते पर लिटा दिया और कह दिया कि तुमको नसें काट कर मारा जायगा। उसकी दोनों बाजुओं पर सुईयां चुभोदी गईं जिससे कि वह समझे कि नसें काट दी गई हैं और बाजुओं पर गरम पानी की धार इस प्रकार छोड़ी गई कि वह इस भ्रम में आगया कि मेरी नसों में से गरम रक्त निकला जा रहा है। फिर झूठ ही यह कहना प्रारंभ किया गया कि रक्त तो बहुत निकल गया—सारे में फैल रहा है—अब इतना निकला अब इतना। कैदी ने कल्पना जगत् में देखा कि वह लहूलुहान होगया है और मरणासन्न है। कल्पना ने इतना भयंकर

स्वरूप उसे दिखाया कि वह कैदी मृत्यु को प्राप्त हुआ।"

कल्पना को ठीक पथ में रखना अति आवश्यक है क्यों कि कल्पना के विकृत स्वरूप से शक्ति का क्षय, असद् विचार, मनोजनित रोग उत्पन्न होते हैं असत् कल्पना, विचार. सामर्थ्य और संकल्प को कुंठित कर देती है। कल्पना संहारक भी है अतः निरर्थक, व्यर्थ के, प्रतिकूल विचारों को मनोमन्दिर में स्थान देना अत्यन्त बुरा है। मानस दृष्टि से केवल सर्वोत्तम चित्रों की ही सृष्टि कीजिए।

## कल्पना शक्ति की वृद्धि के नियम—

जेम्स मा शेल साहब ने कल्पना के संवर्धन के लिए तथा उसको उत्तरोत्तर ठीक दिशा में वृद्धि के लिए कई उपयोगी नियम इस प्रकार बताये हैं। इन्हें कार्य में परिणत करने से अत्यन्त लाभ हो सकता है—

१—विचारों की एक सुनिश्चित दशा बनाइये। उन्हें अपने आदर्श पर केन्द्रीभूत कीजिए, व्यर्थ भटकने न दीजिए।

२—कई भावनाओं का एक जगह मेल कराना सीखिए। परस्पर विरोधी बातों का कल्पना द्वारा सामंजस्य हो सकता है और मनुष्य उद्वेग आन्तरिक संघर्ष से बच सकता है।

३—नोट बुक का प्रयोग कीजिए। उसमें अपने आदर्शों, चित्रों, तथा मौलिक विचारों को लिख लीजिए। प्रतिदिन अन्तःकरण में उठी हुई भावनाओं का लेखबद्ध कीजिए और उनकी सहायता से नव चित्रों का निर्माण कीजिए।

४—विचारों का निश्चित स्थान पर पहुंचाकर की छोड़िये। यह नहीं कि उन्हें उस दिशा में उन्मुख करते ही छोड़ दो।

५—अपने आप का आत्म निरीक्षण करने के पश्चात् ही अपना जीवन क्रम निश्चित कीजिए। कल्पना शक्ति द्वारा यह मालूम कीजिए कि किस प्रकार के चित्र आपके दिमाग में अधिक स्पष्टतर उठते हैं।

६—संसार में जो जो वस्तुएँ विद्यमान हैं उनका दर्शन कीजिए, पुस्तकें पढ़िये, लोगों के स्वभावों का अध्ययन कीजिए और अपने प्रत्यक्ष-ज्ञान का एक विस्तृत खजाना तैयार कीजिए। जितना अधिक सामान आपके पास होगा, उतनी ही कल्पना नई प्रतिमाएँ तैयार कर सकेगी।

७—आदर्श बनाइये क्यों कि यही कल्पना का केन्द्र बनेगा। महापुरुषों की जीवनियों, इतिहास के पुरुषों, लेखकों के चरित्रों में देख कर यह निश्चित कीजिए कि वास्तव में आप क्या बनना चाहते हैं। आदर्श निर्माण के पश्चात् कल्पना उसी केन्द्र पर छोड़ दो। रातदिन उसी का चिंतन, मनन, चित्र निर्माण करो।

## कल्पना शक्ति से सम्पूर्ण मानसिक शक्तियों का विकास—

तुम अपने शरीर को पूर्ण स्वस्थ, निर्विकार, सुघर बनाना चाहते हो तो वैसे ही बलिष्ठ व्यक्ति की कल्पना करो। मानसिक दृष्टि से उच्च स्थिति की मूर्ति बनाओ। तुममें अलौकिक प्रतिमा प्रस्तुत है केवल उसकी तीव्रतर कल्पना करो। यदि तुम मानसिक शक्तियों का विकास चाहते हो तो "उन मानसिक शक्तियों का पूर्ण विकास हुआ है।"—ऐसी भावना दृढ़ करो। सभी व्यक्तियों की उच्चातिउच्च स्थिति, उच्च वैभव, उच्चतम प्रतिमा के मानस चित्र रचना में कल्पना व्यय करो। अपने चित्रों को स्पष्ट, स्पष्टतर और स्पष्टतम बनाओ। उनके लिए यत्न करो। तत्पर रहो। इन आशापूर्ण तरङ्गों से ही सिद्धि मिलती है। ये महत्त्वाकांक्षाएँ ही हमारी शक्ति की सूचक हैं, सत्य हैं, बड़ी प्रबल है हमारी कार्य-सम्पादन शक्ति के परिणाम की द्योतक हैं। हम जिसकी चाह करते हैं. जो आदर्श हमने बनाया है वह अवश्य हमारे सन्मुख प्रकट

होगा। जिस दिन से हम आदर्श की प्राप्ति के लिए मन, वचन, काया से प्रयत्नवान् होने की कल्पना करते हैं, उसी दिन से हम इच्छित पदार्थ से अपना सम्बन्ध जोड़ना प्रारम्भ करते है।

## कल्पना जादू है—

संगीत, साहित्य, चित्रकारी, आत्मज्ञान, शिल्प मंत्रविद्या, लेखन, या वक्तृतकला-जिस विषय की ओर तुम्हारी अभिरुचि हो उसी के भव्य मानस चित्र निर्माण करो, कल्पना की तूलिका से उसमें रंग भरो, और अन्तःकरण से उसकी सिद्धि के लिए प्रयत्नवान् हो जाओ। अभिलाषा तभी फलोत्पादक होती है जब वह दृढ़ निश्चय में परिणित कर दी जाती है।

ज्यों ज्यों कल्पना शक्ति आदर्श के सूक्ष्म प्रदेशों में प्रवेश करती है वैसे वैसे महत्ता जाग्रत होती है। कल्पनाशक्ति जादू है। इसकी शक्ति बड़ी अद्भुत है। इसके द्वारा ही हम प्रतिक्षण प्रतिपल अपना भला बुरा भविष्य निर्माण कर रहे हैं सुख प्राप्ति का मूल किसी बाह्य जगत् की वस्तु में नहीं प्रत्युत हमारी कल्पना में है। मन में जैसी कल्पना अंकित होती है उसी प्रमाण में बाह्य जगत् का अनुभव होता है। हमारा भाग्य प्रारब्ध, सुख दुख का रहस्य कल्पना देवी के ही कर कमलों में है। इच्छा हो तो कल्पना शक्ति द्वारा हम आनन्द के सर्वोच्च शिखर पर आरूढ़ होकर जीवन को आनन्दमय बना सकते हैं। कल्पना हमें सम्पूर्ण आधिव्याधियाँ, दुःखों चिन्ताओं से मुक्त कर सकती है। यदि तुम खुद कल्पना में आत्मा को स्नान कराने की आदत डाल लोगे और इस बात का प्रबोध करोगे कि "मेरा अनिष्ट कदापि नहीं हो सकता" तो तुम्हारा प्रतिकूल प्रारब्ध, कठिनाइयाँ चिन्ताएँ अनुकूल ग्रहों में परिवर्तित हो जायेंगे।

—※—

# मनोभावों से स्वास्थ्य का-उत्थान और पतन।

( अन्तःकरण की भिन्न-भिन्न प्रवृत्तियों का-मनुष्य पर प्रभाव )

—o:—

## रचनात्मक कार्य का मूल स्रोत—

जब तक मनुष्य अपनी भीतरी अवस्था का ध्यानपूर्वक विचार नहीं करता और अपने भीतरी शत्रुओं अर्थात् क्रोध, स्वार्थ, चिन्ता, निराशा, संताप का काबू में नहीं करता, जीवन की निराशा एवं क्षुद्र वासनाओं को मन मन्दिर में से नहीं निकाल देता तब तक वह पूर्ण स्वास्थ्य लाभ नहीं कर सकता। अनिष्ट मनोभावों से मुक्ति ही उत्तम स्वास्थ्य का रहस्य है।

जितना ही मनुष्य स्वार्थपरता को छोड़ेगा और अलौकिक बुद्धि, जो बल और योग्यता प्रदान करता है, को विकसित करेगा उतना ही उसके महान् सामर्थ्य जाग्रत होंगे। अन्तर्मन की गुप्त शक्तियाँ प्रकट होंगी। अन्तःकरण में कोई भी विचार दृढ़ता से जमाने पर वे मस्तिष्क में दृढ़ता से अंकित होजाते हैं।

इसके विपरीत अति क्रोध, शोक, चिन्ता से मन की शक्तियों का ह्रास होता है। जब तुम अपने आपको कोसते हो, अनिष्ट मनोभाव के वशीभूत हो जाते हो, चिन्ता करते हो, भयंकर व्याधियों को न्योता देते हो। पाचन क्रिया में व्यवधान उपस्थित कर देते हो और रक्त को, अशुद्ध बना देते हो। तुम्हारे गिरे स्वास्थ्य का कारण तुम्हारे अन्तःकरण की दुर्बलता है। नीच स्थिति ही तुम्हारे अतुल सामर्थ्यों का नाश कर रही है।

हम नित्य प्रति के जीवन में अपने मनोभावों के अनुसार अपनी कार्योत्पादक शक्ति को बढ़ाते या पंगु करते रहते हैं। यदि हम सदा पूर्ण स्वास्थ्य,

सुख, शान्ति का आदर्श सन्मुख रखकर उत्तम स्वास्थ्य के लिए प्रयत्नशील हों और यह समझते रहें कि सर्वशक्तिमान परमात्मा के अंश होने से हम आत्मा हैं, तो हमें वह स्वास्थ्यकर शक्ति प्राप्त होजायगी जो हमारे अन्तःकरण की निम्न भूमिका में स्थिति रोग सम्बन्धी भ्रान्तियों को कमजोर कर देगी ।

क्षुद्र मनोभाव से हम आपके स्वास्थ्य को दुर्बल कर डालते हैं। भ्रम, व चिन्ता हमें कहीं का भी नहीं छोड़ती । हमें चाहिये कि अपने मन में अप्रीतिकर, अस्वास्थ्यकर, और बुढ़ापे के विचारों को हटाने का अभ्यास करें, जीवन के कलुषित एवं कष्टसाध्य उपकरणों पर कल्पना को न भड़कने दें, अपने विषय में गर्हित चित्रों की छाया मनः प्रदेश में न प्रवेश होने दें। आप अपने जीवन में जो कुछ भी करें, जिस ओर अग्रसर हों, अपने मनोभाव उत्तम रखिए और उन्हें केवल उच्च भूमिका में ही विचरण करने दीजिए।

## व्यायाम के समय हमारे मनोभाव--

कितने ही व्यक्ति व्यायाम करते समय अपनी मनोभावनाओं पर किंचित भी ध्यान नहीं देते। वे अपने रग पट्ठों को झटक पटक कर थका डालते हैं, डम्बल एवं मुग्दर घुमा फिराकर पसीने २ होजाते हैं, घी और बादाम खा-खा कर खूब धन व्यय करते हैं किन्तु इन सबसे अधिक मूल्यवान् वस्तु अपने मनोभावों पर, किंचित भी दृष्टि नहीं रखते । उन्हें उचित है कि अपने मनोभावों को भी अपनी शारीरिक उन्नति की कल्पना में लगायें, अपने आप को ऐसे पुष्ट संकेत दें कि रग पट्ठों में द्विगुणित वेग से रक्त प्रवाहित होने लगे। अपने उत्तम मनोभावों से जितने अंशों में हम अपनी शारीरिक उन्नति कर सकते हैं, उतनी अन्य किसी बाह्य उपकरण द्वारा नहीं। व्यायाम करते समय यह सोचना चाहिए कि हमारा प्रत्येक अंग सुन्दर एवं सुदृढ़ बन रहा है। अंग अंग में स्फूर्ति का संचार हो रहा है। नया जीवन, नया जोश, नया उत्साह प्रवेश कर रहा है। हम अधिकाधिक बलशाली बन रहे हैं। अपनी पुरानी कमज़ोरियों तथा निर्बलताओं को हम क्रमशः छोड़ते जारहे है । हमारा कायाकल्प होता जा रहा है । हम उच्चतर जीवन में प्रविष्ट हो रहे हैं।"

इस प्रकार के पुष्ट आत्म-निर्देशों से जितनी शीघ्रता से लाभ होता देखा गया है, उतनी शीघ्रता से घी दूध से नहीं। स्मरण रखिए, स्वास्थ्य के बाह्य उपकरण आपके अन्तर्बल के सहयोग ( Co-operation ) में ही कार्यशील होते हैं । बलों में मनोबल सब का सम्राट् है। इस बल को जाग्रत करने पर ही आप जीवन में सफलता प्राप्त कर सकते हैं। इस महान् बल का उपयोग जीवन के हर पहलू में किया जा सकता है।

## निद्रा के समय हमारे मनोभाव—

रात्रि में आपका अव्यक्त मन नई रचना किया करता है। अतः रात्रि में सोने से पूर्व जैसे मनोभाव लेकर हम सोते हैं, उन्हीं के अनुसार हमारा अव्यक्त निर्माण कार्य करता है । यदि हम उत्तम, पुष्ट, पवित्र भावनाएँ लेकर निद्रा में प्रवेश करें, तो निश्चय ही हमारा अव्यक्त मन ( Subcons cious ) उत्तम रचना करेगा। जैसी अच्छी या बुरी वासनाएँ लेकर हम सोयेंगे, उनके अनुसार ही शरीर का अणु अणु निर्मित होगा । जैसे आपका रक्त नाड़ियों में दौड़ता है, वैसे ही आपके मनोभावों की विद्युत् निरन्तर रक्त में प्रवाहित हुआ करती है।

निद्रा से पूर्व आप पवित्र से पवित्र मनोभाव रखिये। आप सोचिये कि "मैं महान् पिता का परम सामर्थ्यशाली पुत्र हूं। अतः उन्हीं के अनुरूप सदा आनन्द स्वरूप, षड् गुणैश्वर्य सम्पन्न, सर्वज्ञ एवं सर्व शक्तिमान् तथा पूर्ण पवित्र हूं । मेरे शरीर

में किसी का अभाव न होकर मैं नित्य सब भांति से परिपूर्ण हूं।" इस प्रकार की भावनाओं में रमण करने से आपका अन्तर्मन इन्हें दृढ़ता पूर्वक ग्रहण कर लेगा फिर जगत् में ऐसी कोई शक्ति नहीं है जो आपके सुख, शान्ति एवं पूर्ण समाधान का अपहरण कर सके।

### मनोभावों पर तीव्र दृष्टि रखिए—

### जो भाव प्रकट करोगे, वही अनुभव करोगे—

चिड़चिड़ापन या अस्थिरता की भावनाओं से यकृत को अत्यन्त हानि पहुंचती है और कोष्ठबद्धता उत्पन्न हो जाती है। चिंतित भावनाओं से हृदय पर आघात पड़ता है। इसी प्रकार क्रोध से मनमें भयंकर प्रभाव पड़ता है। इसके विपरीत हँसी खुशी की भावनाओं से शरीर का प्रत्येक अवयव बल प्राप्त करता है। एक सुन्दर मुस्कान सैंकड़ों दवाइयों से श्रेष्ठ है। खेल कूद मित्र मंडली में हास परिहास से व्याधि एक दम दूर होती देखी गई है। होम्यो-पैथिक चिकित्सा में तो विशेष मानसिक स्थितियों का इलाज भी औषधियों से किया जाता है क्यों कि प्रत्येक बुरी मनः स्थिति भी घातक है।

एक बात बड़े महत्त्व की है। आप शरीर से जैसी मानसिक भावना प्रकट करोगे वैसी ही मनो-भावनाओं का आप वास्तव में अनुभव भी करने लगोगे। यदि तुम दुःख की भावनाओं को मुख पर प्रकट करोगे तो अवश्यमेव तुम क्लान्त ही रहोगे, तुम्हारा हृदय किसी अज्ञात पीड़ा से रो उठेगा। यदि उत्साह, प्रसन्नता, खुशी प्रकट करोगे, तो तुम सचमुच सुख और प्रसन्नता का ही अनुभव करोगे और असाधारण स्वास्थ्य लाभ कर सकोगे। प्रेम, क्रोध, शोक, करुणा, हास्य, जो भी भाव प्रकट (Express) करोगे वही अनुभव (Feel) भी करोगे।

### प्रातःकाल के मनोभावः—

प्रातःकाल किसी सुन्दर पवित्र भजन का उच्चारण करते हुए उठने से चित्त बड़ा पवित्र बना रहता है, उद्वेग नहीं सताता, काम में बड़ा आनन्द आता है, दिल में एक अजीब मस्ती सी छाई रहती है। बात यह है कि प्रातःकाल अव्यक्त मन में जैसे मनोभाव दृढ़ कर लिये जाते हैं पूरे दिन वैसे ही दिन कटता है। यदि कहीं आप क्रुद्ध हो गए तो समझ लीजिए सम्पूर्ण दिन चित्त व्यग्र रहेगा, बात बात में आप उखड़ेंगे और किसी काम में भी मजा न आवेगा।

ईश्वरीय आनन्द का भाव सम्पूर्ण आधि व्याधियों का नाश करने वाला है। ईश्वर मैं ही हूँ, मैं ईश्वर बन कर रहता हूं, खाता पीता व्यवहार करता हूं—ऐसी सूचनाएँ देने से आनन्दका भाव गुप्त मन में दृढ़ हो जाता है गुप्त मन ही हमारी शक्ति, शान्ति, स्वास्थ्य तथा जीवन का स्रोत है। गुप्त मन को वे ही मनोभाव दीजिए जो आपके लिए हितकर हों।

मनोभावों ने हमारे अन्तर्जगत् का निर्माण किया है, जो कुछ हम हैं अपने मनोभावों की बदौलत हैं। यदि हमारे मनोभाव दुष्ट हैं तो हमारे साथ नीचता, उसी भांति रहती है जैसे व्यक्ति के पीछे छाया। यदि हमारे मनोभाव पवित्र, शुचि, उत्तम हैं तो हमारे मुख पर उनका दिव्य प्रकाश सदैव देदीप्यमान रहता है।

### कार्य करते समय हमारे मनोभाव—

जब आप अपने प्रिय कार्य में संलग्न हों या जीविकोपार्जन में व्यस्त हों तो मनोभावों को अपने पक्ष में उत्तेजित कीजिए। काम को एक प्रिय कार्य समझ कर कीजिए। बेगार काटने से थकान मालूम होगी और तिलका पर्वत नज़र आवेगा। चिंता और भय को दूर कर दो। इन भावों के प्रवेश से बल, पुरुषार्थ, स्फूर्ति एवं स्वास्थ्य का क्षय होता है। ऐसी भावना दृढ़ करो कि तुम अपना कार्य (Job) करने में पूर्ण समर्थ हो, उसमें खूब उन्नति कर रहे

हो, प्रशंसा के पात्र बने हुए हो। साहस, आत्म-विश्वास, बल की भावनाएँ प्रदीप्त रक्खो। यदि कोई प्रतिकूल भाव मनः क्षेत्र में प्रवेश करे तो उसे निर्भयता के शस्त्र से चूर चूर कर दो।

## मनोभावों का आकृति पर प्रभाव—

जिस प्रकार प्रकाश तथा विशुद्ध वायु के निरन्तर आदान प्रदान से घर शुद्ध बनता है, उसी प्रकार समृद्धि, स्वास्थ्य, भलाई, तथा परोपकार की भावनाओं के प्रवाह से मुखाकृति दृढ़, सुन्दर, आनन्दप्रद, एवं शान्त बनती हैं आपका मुख अन्तर्जगत् का प्रतिबिम्ब है। उसमें आपकी हृदयाकांक्षाएँ स्पष्ट परिलक्षित होती हैं। आपकी मुखाकृति देख कर चतुर मनुष्य आपका चरित्र क्षण भर में मालूम कर लेते हैं। अतः हृदय में केवल पवित्रता एवं हितैषिता की भावनाओं को स्थान दो।

## निष्कंटक जीवन के मनोभाव—

मन में पवित्रता, आनन्द एवं स्वास्थ्य के मनोभावों को ही स्थान दीजिए। मैं अधिकाधिक बलवान् हो रहा हूं, मेरी स्मरण शक्ति दिन प्रतिदिन तीव्रतर हो रही है, मैं सुखी, समृद्ध एवं तेजस्वी बन रहा हूं, मैं शान्त, स्वस्थ, गंभीर हूं—ऐसे मनोभावों में आत्मा को रमण कराने से आनन्दमय जीवन बन जायगा। सब प्रकार की दुर्बलताओं एवं दुर्व्यसनों का नाश होगा।

अतः मन में पूर्ण आरोग्य स्वरूप होने का प्रयत्न करो। मनमें अपना ऐसा भावी मनः चित्र तैयार करो जो सब प्रकार से परिपूर्ण हो, सामर्थ्यशाली हो। मन में सामर्थ्य स्वरूप एवं बलस्वरूप होने की दृढ़ इच्छा करो। मन में शान्त और विशुद्ध होने के मनोभावों को ही स्थान दो, सुखी एवं विश्वप्रेमी होने की कल्पना में ही विचरण करो। जो तुम अपने आप से करवाना चाहते हो; मनमें उसी प्रकारके मनोभावों को दृढ़ता से जमाओ।

विशुद्ध, पवित्र, हितैषी मनोभावों में रमण करने वाला कर्मयोगी बड़े सुख एवं आनन्द से जीवन व्यतीत करता है। बुद्धि बल से वह घृणा, द्वेष, शोक, संताप की समस्त भूमिकाओं का परित्याग करता है तथा प्रेम, शुद्ध शान्ति, एवं पवित्रता के मार्ग का अवलम्बन करता है।

## निकृष्ट मनोभावों से पतन—

"पुण्यस्य फल मिच्छन्तं पापं करोति" सुख समृद्धि युक्त रसीले फल चखने के लिए प्रत्येक व्यक्ति लालायित रहता है किन्तु शोक! महाशोक! जरा-जरा सी प्रतिकूलता में वह नित्यप्रति दुःख विषाद के कडुवे बीज मनोभूमि में बोता रहता है। नीम के कडुवे बीज बोकर मीठे आम कैसे प्राप्त हो सकते हैं।

भय, चिंता, शंका, दुःख, निराशा आदि के मनोभावों को हृदय में स्थान देकर हम सुख की आशा कैसे कर सकते हैं? यदि मनोभाव विषम हैं तो उसका विष शरीर के प्रत्येक अवयव में प्रवेश कर जायगा एवं अङ्गों को शिथिल कर देगा। अतः समस्त जीवन क्रम नितांत दुःखमय, असंयमी, आत्मघातक बन जायगा। यदि भावना स्वार्थ पूर्ण है तो संसार भी वैसा ही है।

## जीवन की सर्वोत्तम विधि—

मनमें आप अपनी दुनियां अमृतमयी या विषैली बना रहे हैं। उत्थान एवं पतन का कार्य-क्रम निरंतर मनः प्रदेश में चल रहा है। अनजाने में आप कहीं अपना सर्वनाश न कर लें, यह ध्यान रहे।

अपने अन्तःकरण में सात्विक प्रेम के, माधुर्य तथा परोपकार के भावों का बीजारोपण एवं संवर्द्धन कीजिए। शरीर, स्वास्थ्य, बल का यही मूल स्रोत है। अन्तःकरण में स्वास्थ्यमय उत्साह एवं मस्ती की भावना स्थित रखने से तुम्हारी देह पर उसका प्रतिबिंब परिलक्षित होगा, किन्तु उसमें कुछ समय की आवश्यकता है। ज्यों ज्यों प्रेम,

# जनता की मनोवृत्तियों से लाभ उठाइये।

( जन-समुदाय का मन कैसे कार्य करता है ? )

---

यदि आप उच्चपदासीन हैं, उपदेशक या वक्ता का कार्य करते हैं, किसी स्कूल में अध्यापक हैं, तो आपको जनता ( Masses ) की मनोवृत्तियों से अवश्य परिचय प्राप्त करना चाहिए । आपको जनता के मनकी कार्य प्रणाली, उनकी इच्छा, अभिलाषा, प्रभाव डालने के गुप्त उपाय, उन्हें उत्तेजित करने की शास्त्रीय प्रणाली अवश्य जाननी चाहिए। राष्ट्रीय क्षेत्र में कार्य करने वाले नेताओं को जनता की अन्तश्चेतना की जानकारी प्राप्त करना अति आवश्यक है।

### जनता की मनोवृत्तियां—

जनता में तथा एकत्रित जन-समुदाय में विचार शक्ति दबी रहती है। कई विद्वानों का मत है कि जनता को विचार शक्ति कल्पना तथा भाव या विकार द्वारा आच्छादित होकर पगु हो जाती है। जनता पर कुछ हियनोटिक प्रभाव इस प्रकार पड़ता है कि विचारशक्ति निर्बल हो जाती है, अन्य मानसिक शक्तियाँ जैसे—तर्क शक्ति, तुलना शक्ति, स्मरणशक्ति, उद्योगशक्ति, भी कुछ काल के लिए बलहीन हो जाती है। जनता की विचार प्रक्रिया अत्यन्त जटिल है। उसमे किसी वस्तु का प्रत्यक्ष, स्मरण एवं कल्पना इस प्रकार सम्मिलित रहता है कि उसे पृथक् करना कठिन है। प्रत्येक विचार के तीन अङ्ग हैं—संविता अर्थात् निरीक्षण, निर्धारण एवं तर्कना। जनता की विचार धारा में तर्कना का अंश अत्यन्त न्यून होता है। किसी निर्धारण में सत्य या असत्य का कितना अंश है, कौनसी बात ठीक ठीक कही गई है, तथा कौनसी बिल्कुल निराधार है—यह निर्णय करना जनता की बुद्धि से कुछ समय के लिए दूर हो जाता है। वे सही तथा गलत में शीघ्रता से अंतर नहीं मालूम कर पाते। वक्ता जैसा संकेत करता है उसे वे ठीक मानने लगते हैं तो अन्त तक सब कुछ ठीक ही मानते चले जाते हैं।

### विचार की अस्थिरता—

कुछ समय के लिए श्रोताओं की विचार शक्ति अस्थिर हो जाती है या यों कहिए कि वह बिल्कुल मन्द सी पड़ जाती है। वह संवितों एवं निर्धारणों की तुलना नहीं कर पाती। संविता ( Ideas and concepts ) की तुलना निरंतर होनी चाहिए इनके परस्पर सम्बन्धों का निश्चय भी लगातार होना चाहिए। जो सम्बन्ध असत्य हों उन्हें बदल देना तथा जो सम्बन्ध सत्य हों उनको स्थिर करना चाहिए। यही शुद्ध विचार क्रिया है। किन्तु जनता इन सम्बन्धों की सत्यता पर शक शुबा नहीं करती। वह मेल बे मेल बातों में अन्तर नहीं निकाल पाती प्रत्युत कुछ का कुछ समझ लेती है। कभी कभी तो ऐसा देखा गया है कि दो विरुद्ध निर्धारण तक जनता के मनमें स्थित हो जाया करते हैं।

### जनता की विवेक शून्यता—

नवीन निर्धारणों का पूर्व निर्धारणों के अनकूल न होने से जनता की विवेक शून्यता-स्पष्ट हो जाती है। जनता के मन को एक निश्चित दिशा में कार्य करते करते इतना अभ्यास हो जाता है कि वह उसी मार्ग पर चलने का आदी हो जाता है। नवीन दिशा ग्रहण करना तथा पुरानी लकीर को छोड़ना उसके लिए अत्यन्त कठिन हो जाता है। जो विचार जनता के पूर्व संचित विचारों, निर्धारणों से मेल

---

परोपकार, स्वास्थ्य के मनोभाव अन्तःकरण में स्थायी बनेंगे, त्यों त्यों मुख मंडल तेजस्वी और देह सुन्दर बनती जायगी।

---

नहीं खाते वे असत्य कहे जाते हैं। जनता सोचते समझते हुए भी विवेक-शून्यता दिखाया करती है। यही कारण है कि वृद्ध हिन्दू जाति नवीन उदार विचारों को स्वीकार नहीं करती और हानि उठाने पर भी पुरानी लकीर के फ़कीर बनी हुई है।

## जनता की भावनाएँ भड़काइये—

जनता भाव प्रधान ( Full of feeling ) होती है। उससे क्षोभ ( Emotion ) तथा विकार सरलता से उत्तेजित किये जा सकते हैं। भावावेश में उत्तेजित होकर जनता कुछ का कुछ कर देती है। उसे यह विवेक ही नहीं होता कि वह क्या कर रही है। फ्रांस की राज्य क्रान्ति में जनता ने भड़क कर जो रक्तपात किया था उसे प्रत्येक इतिहास का विद्यार्थी जनता है भाव की भूख जनता भगवान् श्रीराम के साथ किस प्रकार बनवास के लिए चली गई थी इससे भी प्रत्येक हिन्दू परिचित हैं।

जो वक्ता हाथ पटक पटक कर या आवाज ऊँची नीची कर जनता को उत्तेजित कर लेता है, उसके वश में जनता आ जाती है तथा उसी के आदेशानुसार कार्य करने लगती है। भक्ति भाव से पूरित होकर जनता झूमने लगेगी, प्रत्येक व्यक्ति गा उठेगा, ताली पीटने लगेगा, और उनके मुखों से प्रेम-भाव प्रकट होने लगेगा। क्रोध से मत्त होकर जनता हथियार निकाल लेगी और दांतों से कच्चा चबा डालने को प्रस्तुत हो जायगी। दुःख से अभिभूत होकर जनता रो उठेगी, पत्थर का हृदय भी जनता में मिल कर अपने को न संभाल सकेगा। हास्य में विभोर होकर वे प्रत्येक उचित अनुचित बात पर हँसेंगे। मज़ाक बनावेंगे, पागलों की तरह क्रियाएँ करने लगेंगे। होली के दिनों में मज़ाक बनाती हुई जनता के सामने कैसा ही साफ़ सुथरे वस्त्र वाला व्यक्ति क्यों न आ जाय अवश्य मज़ाक का शिकार बन जायगा।

जनता अपने क्षोभ या भावना की उत्तेजना के अनुसार कार्य करती है अतः चतुर व्यक्ति को जनता की भावनाएँ प्रदीप्त करने का उपक्रम करना चाहिए। मनुष्यों का हृदय एक विचित्र सरोवर है और भाव या विकार उसकी अद्भुत लहरें हैं। वक्ता को यह मालूम करना चाहिए कि किस समय कौन लहर उठेगी। कभी कोई भावना उत्तेजित हो उठती है तो कभी दूसरी। बीच बीच में विभिन्न मनः स्थितियां बनती रहती हैं। सिद्धहस्त कार्य कर्त्ता जनता के क्षोभ-केन्द्रों पर बड़ा ध्यान रखते हैं।

## कौन कौन भावनाएँ अधिक उत्तेजित होती हैं?

यह एक ऐसा प्रश्न है जिस पर पर्य्याप्त प्रकाश पड़ चुका है। जनता पर ललित क्षोभों ( सुन्दर चित्र, मनोहरी गाने, बाजे, उत्तेजक दृश्यों ) का प्रभाव अत्यधिक पड़ता है। सौंदर्य सम्बन्धी क्षोभों के लिए जनता प्रस्तुत रहती है। ललित क्षोभ दो ओर से जनता पर प्रभाव डाल सकते हैं। ये दो इन्द्रियां हैं चक्षु एवं कर्ण। बात यह है कि इन दो से तत्काल आनन्द प्राप्त होता है। ललित क्षोभों को हम बखूबी अन्य व्यक्तियों के साथ भाग सकते हैं।

ललित क्षोभों के लिए यह जरूरी नहीं कि वे सदैव पवित्र ही हों। किन्तु अक्सर देखा गया है कि पवित्र सौंदर्य क्षोभों का प्रभाव अधिक पड़ता है। भक्ति-भाव को हम ललित क्षोभों के अन्तर्गत ले सकते हैं। भक्ति भाव उमड़ने से जनता के मनमें आनन्द लहराने लगता है। देश प्रेम की भावनाएँ भी बड़ी तेजी से जनता में फैलती हैं और उन्हें उत्तेजित कर देती हैं। इसी प्रकार क्रोध, आवेश, तथा प्रतिक्षोभ की भावनाएँ भी अत्यधिक उमड़ सकती हैं। प्रतिशोध की भावनाएँ कभी कभी जनता के रग रेशे तक में प्रवेश कर जाती हैं जो ज्वालामुखी पर्वत की तरह अन्दर ही अन्दर, सुलगा करती हैं और फिर एक दम प्रकट हो जाती हैं।

## जनता की अनुकरण प्रियता—

जनता वैसा ही करती है जैसा एक व्यक्ति

करना शुरू कर देता है। उदाहरणार्थ यदि जनता में से एक व्यक्ति पत्थर उठा कर फेंकने लगे, तो अन्य व्यक्ति भी उसी तरह पत्थर उठाकर फेंकने लगेंगे। जिन वचनों का एक उच्चारण करेगा, अन्य व्यक्ति भी बिना समझे बूझे वैसा ही दुहराते चले आवेंगे। जैसा उपदेशक करने को कहेगा, वैसा ही भोली जनता करती चली जायगी।

अनुकरण शक्ति जनता के जीवन की एक बड़ी शक्ति है। हमारे नित्य-प्रति के जीवन में भी इसका एक बड़ा भाग रहता है। हम बहुधा दूसरों के कार्यों का अनुकरण, बिना उपयोगिता पर विचार स्थिर किए, किया ही करते हैं। वे ही कार्य हमें रोचक भी मालूम पड़ने लगते हैं। इसी प्रकार जनता में खड़ा हुआ एक विचारशील सज्जन भी कभी कभी पाशविक वृत्तियों का शिकार हो जाता है। वह जैसी संगति में बैठता है, वैसा ही करता है। संगी साथियों की क्रिया प्रक्रियाएँ वैसा ही प्रभाव, वैसा ही संस्कार उस पर डालती हैं। जनता में या श्रोताओं में बैठ कर मनुष्य का चित्त सदा सावधान नहीं रह पाता। कभी कभी हम जनता के आवेश को देख कर इतना चन्दा दे बैठते हैं कि बाद में पछताते हैं। जनता की अनुकरण प्रियता संगति का प्रभाव स्पष्ट करती है।

## जनता की पूर्व निश्चित धारणाएँ—

जनता पर प्रोपेगेन्डा का प्रभाव बहुत पड़ता है। जैसी बात सुनते हैं, वे उसी पर क्रमशः विश्वास करने लगते हैं। यही विश्वास कालान्तर में उनकी निश्चित धारणाएँ ( Fixed Beliefs ) हो जाती हैं। यदि उन्होंने एक बात पर पक्का विश्वास कर लिया तो उसको जनता के मनः प्रदेश से निकालना बड़ा कठिन है। जिस महात्मा पर जनता का विश्वास जम गया, वह उन्हें खूब ठग सकता है। जिस देवी, देवता, जादू, मंतर, झाड़ फूँक की उपयोगिता के विषय में वे निश्चित धारणाएँ बना चुके, वे वैसे ही रहेंगे, चाहे आप उन्हें कितना ही हटाना चाहें।

जनता वस्तु के प्रयोजन पर विचार नहीं करती। वह जो दूसरे कहते हैं—चाहे वह सच हो या झूठ—वही मान लेती है। निर्णय करने, चुनने या किसी प्रकार का विवेचन ( Deliberation ) करने की आदत जनता की नहीं है। जिस चीज को वे स्टैन्डर्ड समझ गए जिस कपड़े के ऊपर उनकी आस्था हो गई वही उत्तम है। निर्णय की पराधीनता जनता का स्वभाव है। वह दूसरों के निर्णयों, आचार विचारों और योग्यता से अपने संकल्प बनाती है। अपने निर्धारणों को परिवर्तित, संचालित या प्रोत्साहित या निरुत्साहित करने की योग्यता उसमें अति न्यून है।

## जनता पर हिप्नोटिज्म—

जनता पर महान् व्यक्तियों के विद्युत् प्रवाह का असाधारण प्रभाव पड़ा करता है। यह विद्युत प्रवाह उनकी निश्चित धारणाओं की ही एक प्रक्रिया है। यह वह स्थिति है जिसमें जनता आत्म समर्पण कर देती है। कितनी ही बार देखा जाता है कि उपदेशक या वक्ता बोल कुछ नहीं रहा है किन्तु जनता फिर भी उसे सुनने को उतावली चली आती है। हम इसे उन महान् व्यक्तियों का आत्म-तेज कह सकते हैं। मैली से मैली आत्माएँ भी तपोधन ब्राह्मणों के आत्म-तेज से प्रवाहित होती हैं। इस आत्म तेज के बल से बड़े बड़े बली, उन्मत्त एवं धनाढ्य भी थर थर कांप उठते हैं। मुख मंडल की इन सूक्ष्म तरङ्गों से जो व्यक्ति भी वक्ता के निकट आता है, उतनी देर के लिए उसके प्रभाव में रहता है। इसी तेज के प्रभाव से महर्षियों के आश्रम स्वर्ग धाम बनते थे।

दुनियां के जितने बड़े बड़े वक्ता, सेनापति, नायक शासक हुए हैं वे सब इस आत्म-तेज से परिचित थे और इसी के असाधारण बल पर अपनी विशाल

सेनाओं को काबू में रखते थे। सीज़र सिकंदर महान्, शिवाजी, गोविन्दसिंहजी, नैपोलियन, फ्रेडरिक, ये सब अपनी सेनाओं को इसी गुप्त हिप्नोटिज्म से काबू में रखते थे।

### जनता की धर्म निष्ठा—

विशाल जन समुदाय को प्रभावित एवं उत्तेजित करने के लिए धर्म बड़ा बलवान उत्तेजक है। जिस देश की जनता अशिक्षित है वहां धर्म भावना से बड़ी उत्तेजक कोई भी शक्ति नहीं। भारत की जनता के विषय में तो यह अक्षरशः सही है। धर्मोपदेशक बृहत् संख्या में जनता को वश में कर लेते हैं। अशिक्षा से हमारी सुनिश्चित धारणाएँ और भी दृढ़ हो जाती हैं अतः हम अपनी स्वयंभू वृत्तियों ( Instincts ) से अत्यधिक प्रभावित हुआ करते हैं। जनता की धर्म निष्ठा की नींव वीर की पूजा ( Hero-worslip ) की स्वयंभू वृत्ति पर स्थित है। अत: उसे उत्तेजित कर हम अशिक्षित जनता को वश में कर सकते हैं। किन्तु हमें जनता की धर्म भावना से स्वार्थ सिद्धि कदापि न करनी चाहिए।

———

पागलपन यथार्थ जीवन की अड़चनों, कठिनाइयों, विषमताओं से दूर भागने का एक प्रयास है। प्रत्येक पागल एक काल्पनिक स्वप्न लोक में विहार किया करता है।

× × ×

जिस प्रकार एक मूर्तिकार अनगढ़ पत्थर में से धीरे धीरे अपनी इच्छानुसार मूर्ति बना लेता है, उसी प्रकार उत्तम जीवन के अभिलाषी साधक को भी अपने अनगढ़ चित्त पर कार्य करना चाहिए, यहां तक कि वह उसको अपने आदर्श के अनुसार बनाले।

× × ×

# चतुर दूकानदार को क्या जानना चाहिये ?

( सफल विक्रेता का एक चित्र )

———

सफल विक्रेता को अपने ग्राहकों की आवश्यकताओं, मनोभावनाओं, रुचियों का गहन अध्ययन करना चाहिए। "हम आप ही की वस्तुएँ क्यों खरीदें ?"—इस प्रश्न का उत्तर उसके पास सदैव प्रस्तुत रहना अनिवार्य है। आइये, एक ग्राहक की मनोवृत्ति का अध्ययन करें।

किसी वस्तु को खरीदने के पाँच कारण हो सकते हैं। जब आप अपनी वस्तु बेचने निकलें तो सोचिए कि इन पाँचों में से किसके अन्तर्गत आप ग्राहक को रख सकते हैं। क्रय करने की मनोवृत्ति के पृष्ठ भाग में सदैव एक आकांक्षा या इच्छा ( Motibe ) रहती हैं। जब कोई ग्राहक दूकान पर आकर माल खरीदता है तो वह निम्न पांच कारणों से अपना निश्चय पक्का करता है—

### ग्राहक के उद्देश्य—

१—अधिक द्रव्य कमाने को या उन्हीं वस्तुओं को बेचकर कुछ और रुपया पैसा पैदा करने की वणिक वृत्ति से प्रभावित होकर। सस्ते माल को खरीदना भी इसी प्रवृत्ति के अन्तर्गत है।

२—लाभ की आकांक्षा ( Utlity )। कुछ व्यक्ति केवल लाभ को सन्मुख रख कर कितनी ही बे ज़रूरी चीज़ें खरीद कर रख लिया करते हैं। कुछ दिन पश्चात् अमुक वस्तु महँगी हो जायगी। अतएव, वे उसे अभी से खरीद लेना दूरदर्शिता समझते हैं।

३—दर्प की पूर्ति (Satisfaction of pride) एक भड़कीला युवक हीरे की अँगूठी पहिनता है और उससे अपने दर्प की पूर्ति करता है। एक

साधारण फ़ाउन्टेन से कार्य हो सकता है किन्तु व्यक्तिगत दर्प की पूर्ति के लिए १८) रु० का पारकेरपेन ख़रीदना इसी मनोवृत्ति के अन्तर्गत है।

४—भविष्य को चिन्ता के निवारणार्थ (Cantion) भी हमें अनेक वस्तुओं का संग्रह करना पड़ता है। इन्श्योरेन्स की पौलिसी ख़रीदना आने वाली विपत्ति से बचने के लिए बुरी लगती हुई भी ले लेनी पड़ती है।

५—व्यक्तिगत निर्बलता (Yielding to weakness) के वशीभूत होकर हमें अनेक बार ऐसी वस्तुएँ ले लेनी पड़ती हैं, जो हम वास्तव में नहीं चाहते। दो चार धनीमानी प्रतिष्ठित सज्जन किसी कार्य के लिए चन्दा वसूल करने आते हैं किन्तु आप उन्हें मना नहीं कर पाते। यह व्यक्तिगत हीनता आपको चन्दा देने को बाध्य करती है।

## ग्राहक को उत्तेजित कीजिए—

यदि आप सफल विक्रेता बनना चाहते हैं तो उक्त पांच उद्देश्यों का गहरा अध्ययन कीजिए। जब आपसे ग्राहक कुछ वस्तु ख़रीदने आये, तो उक्त पाँचों उद्देश्यों में से जिसे आप उपयुक्त समझें, उसे उत्तेजित कीजिए। उसी पर उससे बातें कीजिए, अपनी दलीलें पेश कीजिए, और वस्तु की उपयोगिता के विभिन्न पहलू समझाइये। आपकी दलीलों और उद्देश्यों के सफल प्रकटीकरण पर आपकी बिक्री निर्भर है। दूकानदार को उन्हीं उद्देश्यों पर ग्राहक को फुसलाना चाहिए। फुसलाने में मिथ्या घमंड को उत्तेजित करने से बड़ा काम निकलता है। दर्प की तृप्ति अधिकतर कम पढ़े हुए व्यक्तियों पर जादू का काम करती है।

जब आप सभा सोसाइटी या बाज़ारों में जांय तो यह अध्ययन कीजिए कि कौन कौन वस्तु किन किन कारणों के वशीभूत होकर क्रय करते हैं, किस वस्तु पर ज्यादा आकर्षित होते हैं, किस वस्तु की मांग क्यों बढ़ रही है। पत्रों में प्रकाशित विज्ञापनों पर दृष्टिपात कीजिए, तो आपको प्रतीत होगा कि लोग ताक़त की दवाइयों, सिनेमा के अर्द्ध नग्न चित्रों में, सुगंधित इत्र फुलैल, स्नो, क्रीम कोकशास्त्र में अधिक दिलचस्पी लेते हैं। ये सभी अव्यक्त प्रदेश में छिपी अतृप्त काम वासना के सूचक हैं। इनके द्वारा लोग बाज़ार में ढेरों रुपया कमा रहे हैं। शृङ्गार तथा कामोत्तेजक वस्तुओं की मांग सदैव गर्म रही है। यह समाज की निंद्य एवं दूषित मनोवृत्ति की परिचायक है।

## चार प्रकार के ग्राहकों को याद रखिए—

उद्देश्यों के अतिरिक्त भी चार प्रकार के व्यक्ति होते हैं। जब वे किसी वस्तु को ख़रीदने जाते हैं तो चार प्रकार से ही सोचते हैं—

कुछ ग्राहक गंभीर विचारक होते हैं। ये व्यक्ति किसी वस्तु को ख़रीदते समय बहुत अधिक सोचते विचारते (Reasoning type) हैं। वे दलीलें सुनना पसन्द करते हैं। वे यह चाहते हैं कि आप उन्हें तर्क द्वारा यह समझादें कि वे आपका माल आख़िर क्यों ख़रीदें।

दूसरे प्रकार के ग्राहक लार्ड किचनर-टाइप के कहे जा सकते हैं। इनका ललाट चौड़ा, अन्दर घुसी हुई ठोड़ी, लम्बी मूछें, उग्र मुद्रा, चौकोर सिर एवं छोटी गरदन होती है। ये व्यक्ति अपनी संकल्प शक्ति से संचालित होते हैं। ये आपकी दलीलें, या तर्क सुनना नहीं चाहते। ये तो केवल मान, सन्मान, आदर, सत्कार (Deference) के इच्छुक होते हैं। इन्हें चिकने चुपड़े, प्रशंसा भरे मीठे मीठे शब्दों से वश में किया जा सकता है। पान, बीड़ी, चाय का एक प्याला, सिगरेट इनके वृथा गर्व को फुला सकता है। किसी सूक्ष्म रीति से दूकानदार को ऐसे ग्राहकों के मन में पौरुष-श्रेष्ठता का भाव उत्पन्न कर देना चाहिए। विशेषतः दूकानदार को अपने आपका एक ऐसा दर्पण बनाना चाहिए जिससे दूसरे लोग अपने आप को देखें।

तीसरे प्रकार के ग्राहक न तो मान सन्मान चाहते हैं और न दलीलें ही, वे भावावेश ( Emotion ) से अधिक प्रभावित होते हैं। तैश में, भावातिरेक में आकर वे बढ़िया से बढ़िया और मँहगी से महँगी वस्तुएँ खरीद लेते हैं। इस वर्ग में स्त्री भी शामिल है। स्त्रियाँ झूठी प्रशंसा सुनना अधिक पसन्द करती हैं। तुम्हारी आंखों में स्त्रियों को उनकी झूठी प्रशंसा से भरा प्रतिविम्ब दिखाई दे। तुम उनकी डींगों को, मिथ्या अभिमान के प्रकाशन को, उनकी रुचियों को, शान्ति से सुनते जाओ किन्तु उन्हें कहीं कहीं सहानुभूति द्वारा उत्तेजन प्रदान करते रहो। उन्हें भावावेश में बहने दो। उनकी ऊँची रुचि पर प्रशंसा प्रकट करो, विफलताओं पर समवेदना का मरहम लगाओ।

ऐसे ग्राहक उन्हीं दूकानदारों को पसन्द करते हैं। जो उनकी बातें सुनते नहीं थकते। तथा उनके सनकीपन को निरन्तर प्रोत्साहन देते रहते हैं।

चौथे प्रकार के वे ग्राहक हैं जो घड़ी की सुई की भांति जरा जरा सी बात पर अपना निर्णय बदला करते हैं। ये बड़े अस्थिर प्रकृति के व्यक्ति होते हैं। इन्हें माल बेचने के लिए और काम छोड़ कर कुछ देर इनसे अच्छी तरह बातें करनी चाहिए, उत्तमता की दलीलें पेश करनी चाहिए और किसी न किसी तरह वस्तु की श्रेष्ठता का भाव उनके मनः क्षेत्र में उत्पन्न कर देना चाहिए।

ये व्यक्ति घर से चलते समय यह सोच कर नहीं चलते कि उन्हें क्या खरीदना है, तर्क से परास्त होकर, या दूसरे के बहकावे में फँस कर एक दम काम कर डालते हैं।

निर्धन व्यक्ति माल खरीदना तो चाहते हैं किन्तु धनाभाव उनके मार्ग में बाधक सिद्ध होता है। दूकानदार को इनसे बातें करने में बड़ी समझदारी करनी चाहिए। उनकी स्थिति, स्वभाव, इत्यादि को देख कर वस्तु खरीदना उनके लिए आसान बना देना चाहिए। थोड़ा थोड़ा करके मूल्य वे दो से तीन बार तक चुका दें—ऐसी व्यवस्था से कुछ हानि नहीं होती। साथ ही ग्राहक अपना बना रहता है।

ग्राहक को देख कर पहिचानिए कि वह उक्त वर्गों में कौन सा है? उसके विचार, उसकी मांगें, आवश्यकतायें, तथा रुचि कैसी हैं? ग्राहक का अध्ययन करना अत्यन्त आवश्यक गुर है।

## उधार मांगने वाले ग्राहक—

उधार मांगनेवालों से दूकानदार को सदैव सतर्क रखना चाहिए। उधार मांगने वाला कितनी ही अनावश्यक वस्तुएँ खरीद खरीद कर ऋण चढ़ा लेता है जो पुनः दे देना कठिन हो जाता है। उनके मन में एक प्रकार की ग्लानि, लज्जा, तथा शर्म की भावनाएँ उत्तेजित रहती हैं। वह कभी कभी भ्रमात्मक अविष्ट कल्पनाओं का शिकार बना रहता है। उसके अभ्यन्तर प्रदेश में विक्षोभ एवं आत्म-ग्लानि उत्पात मचाया करते हैं। अतः वह दूकानदार से बचता बचता मुँह छिपाता फिरता है। उस दूकान से वस्तुएँ न लेकर अन्य किसी से खरीदने लगता है। इस प्रकार अदूरदर्शी दूकानदार कितने ही ग्राहकों को खो देते हैं और रुपये की हानि भी करते हैं। उधार लेने वालों से कौशल ( Tactfully ) से काम लेना चाहिये।

## सफल विक्रेता के गुण—

सफल दूकानदार में सहानुभूति, नर्मी, हमदर्दी के गुण अत्यन्त आवश्यक हैं। विनम्र दूकानदार ग्राहक की जली भुनी बातें भी सुन लेता है। उसे अपनी कहने को प्रोत्साहित करता है। ऐसा करने से ग्राहक के मिथ्या दर्प, अभिमान तथा गर्व को उत्तेजना मिलती है। वह अपने आप को बड़ा समझने लगता है तथा अनेक वस्तुएँ गर्व में चूर होकर खरीदने लग जाता है।

जिस विक्रेता ने ग्राहक का मन जीत लिया, उसके हृदय में घर कर लिया, उसे अपना बना लिया

वह उस ग्राहक से खूब कमाई कर सकता है। सहानुभूति एवं नर्मी से साधारण से साधारण दूकानदार ग्राहक का मन रख सकता है। ग्राहक से लड़ना झगड़ना या तेजी से बातें करना, या गर्म हो जाना बहुत बुरा है। इससे ग्राहक पुनः कभी दूकान पर नहीं आता। दूकानदार को तो ऐसी चुम्बक बनना चाहिए कि चलते फिरते लोग आकर वहीं अटक जांय और उससे बातें करने को लालायित हों।

विक्रेता के मुँह पर मधुर मुसकान रहना अत्यन्त आवश्यक है। हँसी हँसी में वह यथेष्ट लाभ उठा सकता है। हँसी में ग्राहक के हृदय की मलीनता, क्रोध, द्वेष बह जाते हैं और वह दूकानदार की ओर आकर्षित हो जाता है।

अपनी भाव भंगियों, मुद्राओं का अध्ययन कीजिए। जब आप दूसरों पर प्रभाव डालना चाहते हैं तो आपका मुख कैसा लगता, उसमें कितना आकर्षण है, कितना माधुर्य। पाश्चात्य देशों में जो लड़कियां बेचने का कार्य करती हैं, उन्हें विशेष रूप से भाव भंगी, मुद्राओं तथा अङ्ग प्रत्यंग के संचालन की शिक्षा दी जाती है।

ग्राहक जो कुछ कहे उसकी हां में हां मिलाना जरूरी है। ऐसा करने से वह और उत्साहित होता है। वह जो कुछ कहे उसे सुनते जाइये। जहां तक हो ग्राहक को दूकान से पूर्ण संतुष्ट भेजना चाहिए। चाहे एक बार नफा कम हो मिले, संतुष्ट ग्राहक भविष्य में अधिक लाभ देता है।

मुफ्त के कलेन्डर, छोटे छोटे इनाम, पुस्तकें, विज्ञापन, पान सिगरेट देना बहुत लाभप्रद है इससे अपनापन बढ़ता है और ग्राहक के हृदय में दूकानदार के लिए स्थान बन जाता है।

---

व्यक्त एवं अव्यक्त मन का द्वन्द्व ही दुःख अथवा रोग है। उसकी एकता का नाम ही सुख या आनन्द है। × ×

# दाम्पत्य जीवन की सफलता का मनोविज्ञान।

(विवाहित जीवन की मनोवृत्तियों का अध्ययन)

---

## पुरुष का स्वभाव—

पुरुष का स्वभाव है कि जब तक अपनी प्रेमिका को प्राप्त नहीं कर लेता, तब तक उसे पाने के लिए अत्यन्त इच्छुक रहता है, प्राणपण से चेष्टा करता है, प्रत्येक प्रकार से प्रेम प्रदर्शन करता है और स्त्री के अतिरिक्त अन्य कुछ भी चीज नहीं प्राप्त करना चाहता किन्तु एक बार मनचाही पत्नि पाने के पश्चात् क्रमशः उसके मनः क्षेत्र में भारी परिवर्तन प्रारम्भ होता है। विवाह के तीन चार मास पश्चात् वह पत्नि की ओर से उदासीन सा होने लगता है। आधी उम्र आने पर अर्थात् ३५, ४० वर्ष का होने पर उसे स्त्री में विशेष आकर्षण नहीं रह जाता वह उसे अपने विचारों का केन्द्र नहीं मानता प्रत्युत अन्य सांसारिक कामों में प्राण पण से जुट जाता है। स्त्री उसके हृदय के एक कोने में पड़ी रहती है। अधिक आयु होने पर वह स्त्री से चिढ़ने लगता है। कितने ही उनसे डरने लगते हैं, दूसरे उनसे सर्वथा उदासीन होने लगते हैं। कुछेक स्त्री को देख भर सकते हैं, उनकी फरमाइश पूरी नहीं करना चाहते।

## स्त्री की प्रकृति—

स्त्री का प्रेम प्रारम्भ में बिल्कुल नहीं रहता किन्तु विवाह के पश्चात् या जान पहिचान होने के पश्चात् धीरे धीरे विकसित होता है। तीन मील लम्बे बूटों की रफ्तार से वह नहीं बढ़ती जरा जरा सी आगे चलती है। जब वह एक बार प्रेमी प्राप्त कर लेती है तो स्वभावतः उसे छोड़ना नहीं चाहती। उसमें ममता, अहं, करुणा, महानुभूति की मात्रा

अधिक है। विवाह के पश्चात् उसकी यह आकांक्षा रहती है कि पति के प्रति उसका प्रेम बढ़े। वह उसके बिल्कुल हाथ में रहे, उसी से प्रेम करे, अन्य किसी को अपने प्रेम में कोई हिस्सा न दे। स्त्री हर प्रकार—आर्थिक, सामाजिक, धार्मिक—से उसकी स्वामिनी बनने को लालायित रहती है।

स्त्री का हृदय प्रेम, करुणा, ममता, एवं सहानुभूति की रङ्गभूमि है, वह कोमलता एवं सहनशीलता की कल्पलता है, क्षमा एवं त्याग की तपोभूमि है, वह भिन्न भिन्न भावनाओं का एक आश्चर्य सम्मिश्रण है। वह चिर सुन्दर है, चिर कोमल है वह अपने प्रिय के लिए अपने सर्वस्व का त्याग कर सकती है और अपने मान अपमान एवं निंदा स्तुति की भी चिंता नहीं करती। वह बड़े से बड़े अपराधी को भी क्षमा कर सकती है।

## दो प्रतिकूल तत्वों का सम्मिश्रण—

उक्त दोनों प्रतिकूल तत्वों से ही संसार का निर्माण हुआ है। इसी प्रतिकूलता में संसार का आनन्द अन्तर्निहित है। बिना पुरुष के नारी अभाव का अनुभव करती है, बिना स्त्री के पुरुष अधूरा ही रहता है। दोनों की न्यूनताएँ दूसरे साथी में पूरी हो जाती है।

पुरुष का निर्माण एक युद्ध करने वाले, दृढ़ी, निडर, हृदयहीन सैनिक के समान किया गया है, उसमें जीवन निर्वाह के साधनों को एकत्रित करने का साहस किया गया है। दूसरी ओर, स्त्री में लावण्य एवं रूप की अनुपम राशि प्रदान की गई है। यदि पुरुष उद्दण्ड है, तो स्त्री कोमल, सहनशील। पुरुष शक्ति—आक्रमक है तो, स्त्री—शक्ति आत्म रक्षक। पुरुष उन्नतिशील होता है, तो स्त्री धैर्यवान्। पुरुष अधिकार, शक्ति, व दण्ड से शासन करता है, स्त्री अपने प्रेम से, आंसू से और मृदुलता से। यदि पुरुष शब्दों से विनय करता है तो स्त्री दृष्टि की विनम्रता से।

डा० बरनार्ड हौबैन्डर ने कहा है—"पुरुष वर्तमान में भविष्य को भूल जाता है, स्त्री भविष्य को सँभालने व अधिक सुखकर बनाने में सदैव प्रयत्नशील रहना चाहती है। स्त्री के मातृभाव के लिए पूर्ण त्याग व निस्वार्थ परिश्रम की आवश्यकता है। पुरुष अपने प्रेम को केन्द्रित कर सकता है, परन्तु स्त्री जब मातृत्व का भार ग्रहण कर लेती है तो उसकी प्रेम धारा सर्वतोमुखी होकर प्रवाहित होती है।

पुरुष अग्रगामी है किन्तु स्त्री मार्ग प्रदर्शक। पुरुष शीघ्रता में प्यार करता है परन्तु स्त्री का प्रेम इतना प्रबल होता है वह अपने प्रेमी के दुर्गुण भी नहीं देखना चाहती। स्त्री वास्तविक असत्य बहुत कम बोलती है। वे अपने गुप्त भेद—विशेषतः अपनी सम अवस्था वाली स्त्रियों के भेदों को छिपाने में बड़ी कुशल होती हैं। पुरुष प्रेम के प्रमाण नहीं चाहता, स्त्री का आत्म समर्पण ही उसके लिए यथेष्ट प्रमाण है पर स्त्री पुरुष के प्रेम पर हमेशा सोचा विचारा करती है।

पुरुष के जीवन में प्रेम एक छोटा सा हिस्सा है. वह शीघ्रता में प्यार करता है, जैसे भागता सा है। किन्तु स्त्री पग पग पर रुकती है, सोचती है तब अपना हृदय देती है। वह अपने प्रेमी के प्रेम का सबूत दिन में कई बार उसके मुख से, वाणी, एवं नेत्रों से चाहती है। उसका संसार मोहब्बत से शराबोर है अन्य बातें उसमें गौण महत्त्व रखती हैं। स्त्री जीवन प्रेम पर ही अवलम्बित है। प्रेम की प्यासी स्त्री को ठुकरा कर भारी शत्रु खड़ा किया जा सकता है। पुरुष आखिर निश्चयी, मजबूत एवं स्फूर्तिमान होता है, स्त्री अधिक सहनशील, प्रेमी, उदार। पुरुष चीर फाड़ करने वाला निर्दयी सर्जन बन सकता है तो सेवा शुश्रूषा करने के लिए कोमल हृदय स्त्री की आवश्यकता पड़ती है।

## सफल दाम्पत्य जीवन का रहस्य—

दाम्पत्य जीवन का समस्त सुख केवल एक

बात में है पति पत्नि एक दूसरे के मनोभावों को समझ लें। अपने साथी की इच्छाओं, आकांक्षाओं, मनोभावनाओं का विश्लेषण करें। एक दूसरे के दृष्टिकोणों को सहानुभूति पूर्वक देखें, समझें और एक दूसरे के सन्मुख सदा सिर झुकाने के लिए तैयार रहें तो उनका जीवन स्वर्गीय प्रकाश से परिपूरित हो सकता है। एक दूसरे के मनोभावों के अनुसार चलने से उनके जीवन में प्रेम की सुखद निर्झरिणी शत शत धाराओं में बह सकती है। स्मरण रखिए, जहां पुरुष दुर्बल है वहां स्त्री की शक्ति प्रकट होती है। पुरुष सर्वस्व प्राप्त कर सकता है और स्त्री सर्वस्व दान दे सकती है। स्त्री और पुरुष दोनों ही सृष्टि की महान् शक्तियां हैं किन्तु पूर्ण होने के लिए दोनों का सहयोग ( Compromise ) चाहिए। पुरुष एवं स्त्री का पारस्परिक सम्मिलन आत्मा का सम्मिलन है।

स्त्री कल्पलता है। जब पुरुष अकिंचन हो जाता है तो स्त्री की छत्र छाया में रह कर वह पुनः शान्ति प्राप्त कर सकता है।

विवाह के प्रारम्भ में आप खूब देख भाल कर पत्नि चुन सकते हैं खूब टीका टिप्पणी कर सकते हैं किन्तु विवाह के पश्चात् एक दूसरे के दुर्गुणों को आँख मीच कर टाल देने में ही लाभ है। आपस की आलोचना डराने धमकाने मारने पीटने से गृह कलह बढ़ती हैं क्यों कि हमारे 'अहं" भाव को भारी धक्का पहुँचता है।

## पति को वश में करने के उपायः—

जो पत्नि अपने पतिका स्थायी प्रेम चाहती है उसे अपने पति के स्वभाव, प्रकृति, विचार, मनोभाव, संवेदनाओं का गहन अध्ययन करना चाहिए। पुरुष पर शासन करने के लिए यह मालूम करना चाहिए कि वह पत्नि से क्या क्या आशाएँ रखता है? उसे किस काम में पत्नि की सहायता चाहिए। वह उसे किस रूप में—सहायक, मित्र, प्रेमिका, गृहणी सेविका—देखना अधिक पसन्द करता है? किन किन गुणों, कलाओं को चाहता है? साथ ही पत्नि को यह भी मालूम करना चाहिए कि पति में कौन कौन दुर्गुण हैं? क्या क्या कमज़ोरियाँ उसके स्वभाव जन्म हैं? क्या क्या दूसरों की कुसंगति से लग गई हैं?

पुरुष बल पराक्रम का पुतला है और किसी न किसी पर शासन करने में आनन्द लेता है अतः उसे अपने ऊपर शासन करने देकर पत्नि उसके "अहं" को उत्तेजित कर सकती है। पत्नि उसकी प्रेमिका होती है अतः वह उस पर पूरा पूरा अधिकार रखना चाहता है। अतः उसे अनुशासन का अवसर दीजिए। विवाहित जीवन में छोटी छोटी बातों पर खड़े होने वाले मतभेदों, ग़लतफ़हमियों, झगड़ों से सतर्क रहिए। यदि कोई मतभेद आये भी तो अपने साथी के दृष्टिकोण को सहानुभूति पूर्वक समझिये।

पति अपनी पत्नि के मुख से ऐसे वचन सुनने को लालायित रहता है जिनसे उसकी श्रद्धा और अगाध विश्वास प्रकट हो। अतः ऐसे वचन कहने में कंजूसी न करो। अपने स्वाभाविक गुणों की वृद्धि करो। कोमलता, सौस्थता, मधुरता, सौंदर्य बढ़ाओ। पुरुष इन गुणों से अधिक आकर्षित होता है क्योंकि ये उसमें नहीं हैं। स्त्री के लिए हँसमुखी और रसिक होना सुंदर होने से अधिक आवश्यक है। पुरुष स्त्री की रसिकता, हँसी, बांकी चितवन पर अधिक आकर्षित होता है स्त्री का जीवन छोटे छोटे झगड़ों से बना है। यदि वह उन्हें हँस कर न टाल सके तो पागलखानों या तपेदिक के अस्पतालों की ही शोभा बढ़ा सकती है। पति को दास वे ही बना सकती हैं जो उसके दोषों या विशेषताओं पर चिढ़ने के स्थान पर हँस कर टाल देती हैं। स्त्री को विकट परिस्थितियों में भी प्राण देकर अपने सतीत्व की रक्षा करनी चाहिए।

सतीत्व का मनोवैज्ञानिक प्रभाव अप्रत्यक्ष रूप से बहुत पड़ता है।

सुमन जी की एक सम्मति विशेष उल्लेखनीय है—"तुम अपने हृदय को सदा प्रेम के जल से छलकता रक्खो। प्रेम की इस पवित्र धारा में घर के आस पास की सारी मलिनता, सारी बुराई बह जायगी. और तुम सदा पवित्र एवं सुखी रहोगी।"

"यादवेन्दु" जी लिखते हैं—"पुरुष बड़ा हो जाने पर भी—विवाहित होने पर अपनी पत्नि से ऐसे ही आचरण की आशा करता है। यदि पति किसी बात से नाराज हो जाय, तो उन्हें वैसे ही प्रेमपूर्वक मनाना चाहिए, जैसे मां अपने रूठे हुए बालक को मनाती है। पुरुष है भी तो विकसित बालक। पत्नि को देख भाल मां की भांति रखनी चाहिए। जब पुरुष को कोई कष्ट होता है, तो वह चाहे जैसा वीर, साहसी और पराक्रमी क्यों न हो, बार बार मां का स्मरण करता है। ऐसा वह क्यों करता है? पुरुष के संस्कार वास्तव में कुछ ऐसे बने हैं कि वह मां के प्रेमपूर्ण प्रभावों को मिटा नहीं सकता। इस वय में भी वह उसी प्रेम को चाहता है। पुरुष चाहे जितना बड़ा क्यों न हो जाय, वह स्त्री के सामने तो शिशु ही है।"

### प्रियतमा को जीतने के मनोवैज्ञानिक सूत्र—

हम में जो गुण नहीं है उनसे युक्त व्यक्तियों के प्रति हम स्वतः आकर्षित होते हैं। अतः प्रियतमा को जीतने के लिए अपने पुरुषोचित गुणों—बल, वीर्य, पराक्रम साहस, अनुशासन—की अभिवृद्धि कीजिए। कोमल, पतले दुबले, कमजोर, स्त्रैण पुरुष स्त्रियों को अच्छे नहीं लगते।

प्रेमी शीघ्रकोपी होना चाहिए जिससे प्रेमिका गुप्त रूप से उससे डरती रहे। उत्कृष्ट प्रेम की उड़ान उन्मत्तता, भय, शंका, की आनन्दोन्माद कारी घाटियों में रहती है। उत्कृष्ट प्रेमी सदा निष्ठुर होता है। प्रेम में पुरुष शिकारी है स्त्री शिकार।

## अपने स्वभाव का अध्ययन कीजिए—

**( आत्म-मनोविज्ञान का परिचय )**

मानसिक बेचैनी का एक कारण यह भी है कि हम अपने जीवन का काम छांटते हुए यह नहीं सोचते कि यह काम हमारे स्वभाव के अनुकूल भी है या नहीं। हम अनाधिकार चेष्टा करते हैं और प्रायः ऐसे कार्यों में हाथ डाल देते हैं जो हमारे स्वभाव के प्रतिकूल हैं।

एक मनुष्य रुपया कमाने की लालसा से धर्मोपदेशक बन जाता है किन्तु अन्त में निराश होकर वह काम छोड़ता है। कितने ही विद्वान् व्यापार

---

स्त्री जितना वीर पुरुष को प्यार करती है उतना धनियों या पंडितों को नहीं। स्त्रीदास एवं दब्बू पुरुष को भी स्त्री पसन्द नहीं करती।

अपने वस्त्रों और वेश पर सदा ध्यान रक्खो। स्त्री यदि अपने सौंदर्य की चिंता करती है, यदि तुम्हारी प्रसन्नता के लिए, उसकी अभिवृद्धि के लिए वह निरन्तर चेष्टा करती है तो इसका यह अर्थ है कि वह सौंदर्य का मूल्य समझती है और तुम्हें भी आकर्षक, साफ सुथरा एक अभिनेता के रूप में देखना पसन्द करती है।

स्त्री की खूबियों का बयान करो, उसका आदर करो, उसके उत्तम कार्यों पर अपनी प्रसन्नता प्रकट करो और इस सबके लिए व्यर्थ की मिथ्या प्रशंसा भी करो। बार बार उसे यह दर्शाओ कि तुम उसे बहुत प्रेम करते हो। यह समझ कर चुप न रह जाओ कि उससे एक बार तो कह ही दिया है। वह आपके मुख से अपने प्रति प्रेम बार बार सुनना पसन्द करती है।

क्षेत्र में प्रवेश करके गिरह का पाई पाई गवां बैठते हैं। जिसका स्वभाव क्रोधी है वह महात्मा बनने का अभिनय करता है। अन्ततः निराश हो कर भागता है।

मनुष्य को चाहिए कि सर्व प्रथम अपने स्वभाव का खूब अध्ययन करे, पहिचाने, सोचे समझे और तब क़दम उठावे। इसी प्रकार किसी दूसरे से व्यवहार करने से पूर्व उसके स्वभाव, आदतों, शिक्षा इत्यादि को पहिचाने। स्वभाव के अनुसार कर्म करने से ही मनुष्य विजयी होता है! आन्तरिक शान्ति के लिए स्वभाव अनुसार ही कर्म कीजिए।

तुम्हारे अन्तःकरण पर जब तक किसी प्रकार का भी दबाव या बंधन है, कोई अन्तर्वेदना या टीस है, तब तक तुम अपने भीतर की महान् शक्ति को विकसित नहीं कर सकते। यदि तुम उन्नत होना चाहते हो तो दूसरों की मानसिक दासता में न रहो, उन पर निर्भर मत रहो। स्वयं अपनी मौलिकता, अपनी विशेषता प्रदर्शित करो। स्वयं विचार करना सीखो और अकारण की गुलामी को दूर करो।

मनुष्य का मन बंदर की तरह बड़ा चंचल है किन्तु जब तक तुम मन को वश में नहीं कर सकते, तब तक तुम परतंत्रता के बंधन से कदापि मुक्त नहीं हो सकते। जब मन वाह्य सुखों से हट कर अन्तर्मुखी होता है चित्त के व्यापारों का दृष्टा बनता है और सूक्ष्म शक्तियां आत्मा की ओर लगाता है तब वह समस्त बंधनों से मुक्त बनता है। मनको आत्मा में तल्लीन कर पूर्णतः लय कर दीजिए तब आप मानसिक स्वतंत्रता पा सकेंगे।

---

## सात्विक सहायताऐं।

इस मास ज्ञान यज्ञ के लिए निम्न सहायताएँ प्राप्त हुईं। अखण्डज्योति इनके प्रति अपनी आन्तरिक कृतज्ञता प्रकट करती है।

२१) बा० डूँगरमल भूत डूँडलोद
११) श्री० बजरंगलाल कानोडिया, डूँडलोद
११) श्री० सेडूमल जी कानोडिया, डूँडलोद
११) पं० कन्हैयालाल शर्मा, डूँडलोद
११) श्री० साँवलदास मेहरोत्रा जौनपुर
१०) श्री० सावित्री देवी जी उलाव
१०) श्री सुगनलाल लहेजा करांची
८) श्री० चन्द्रकान्ता जेरथ, दिल्ली
५) ठा० जसवन्त सिंह जी इस्याइलपुर
५) श्री० रामजीदासजी बियानी, कलकत्ता
५) श्री० किशनलाल रामचन्द, व्यावर
५) श्री० मानसिंह टाक जोधपुर
४) श्री० शंकरजी सुजानगढ़
३) श्री० चन्द्रिका प्रसाद जी माटुंगा
३) श्री० जयलाल शाह एडवोकेट, नैनीताल
२) श्री० जगतनरायण जैन, कानपुर
२) श्री० विष्णुकुमारी देवी सिन्हा लखनऊ
२) पं० प्रभातीराम शर्मा, खेतड़ी
२) श्री० कन्हैयालाल वैश्य करियामई
२) पं० गिरजा भूषण जी जबलपुर
२) श्री० भगवती प्रसाद मोरेना
२) पं० राधे मोहन मिश्र बहराइच
१।≈) श्री० शीतल प्रसाद जी अनीसाबाद
१।) प्रो० आर० के० शर्मा पूना
१) चौ० विश्वंभरसिंह, सुरजनपुर
१) श्री० हरसहाय जी खवा
१) पं० रामदयाल शर्मा तिलहर
१) श्री० शिवपूजन सिंह कुशवाहा, खानखानापुर
१) श्री० विनायकराव भगवन्तराव जोशी सेंधवा
१) श्री० दुर्गासहाय कुलश्रेष्ठ सिरोंहा
१) श्री० शिवशंकर जी मिश्र, कामटी
१) श्री० मालीराम शर्मा खेतड़ी
१) महात्मा गोपालदासजी महाराज बघोई
१) श्री० बामनराव ताटके दमोह
१) श्री० ज्ञानसिंह जी सेन्धवा
१) श्री० लक्ष्मीनारायणजी मुरादाबाद
१) दैवी सम्पद् पुस्तकालय, मैनपुरी

# नन्हे शिशुओं की प्रकृति का अध्ययन कीजिये।

( बाल-मनोविज्ञान की गुत्थियां )

---

## बच्चों की समस्याएँ—

मेरी नन्ही सी पुत्री, रश्मि अपने खिलौनों से खेलते खेलते मेरे पास भागी भागी आती है और कहती है– "बाबू जी, क्या लिख रहे हैं? हम भी लिखेंगे।" आप ही बताइये इस तीन वर्ष की बालिका को क्या समझाऊँ कि मैं "अखंड ज्योति" के विशेषांक के लिए कुछ लिख रहा हूं। अनेक बार आ आकर यह मुझसे विविध प्रश्न पूछती है। "ग्रामोफ़ोन में कौन बोलता है? हमें कालिज क्यों नहीं ले चलते? हमारे लिए भी साइकिल मँगा दीजिए? बाबू जी हम छिपते हैं,आप हमें ढूंढ़िये"– ऐसी अनेक समस्याएँ इस बालिका के मन में हैं।

हम प्रायः बच्चे की विविध प्रश्नावली को सुन कर उखड़ उठते हैं और क्रोधित होकर मार पीट कर देते हैं। बच्चों के मनमें भावों की खींचा तानी उधेड़ बुनको समझ नहीं पाते। उनकी दुनियाँ में क्या क्या होता है, उनके दृष्टिकोण, गुत्थियों, सृजनात्मक प्रवृत्तियों, अभिरुचियों, आन्तरिक प्रेरणाओं की ओर से हम न जाने क्यों नेत्र मूंद लेते हैं।

## सभी की प्रवृत्तियां पृथक् पृथक् पृथक् हैं—

बच्चों की मूल भावनाएँ तो लग भग समान हैं किन्तु उन सब की रुचि एक ओर नहीं झुकतीं। उनमें कुछ का झुकाव किसी ओर तो कुछ का किसी दूसरी ओर होता है। एक शिशु प्रारम्भ से तसवीरें बनाने में आनन्द लेता है, दूसरा गाना गाता है, तीसरा पढ़ना लिखना नहीं छोड़ता, चौथा पेड़ पौधों में प्रवृत्त है। नन्हें बच्चों की विशेष प्रवृत्तियां पहचानने में प्रत्येक माता पिता को बड़ा सतर्क रहना चाहिए। बच्चा जिस दिशा की ओर अधिक प्रवृत्त है वह उसकी विशिष्टता है। प्रकृति ने वह विशेष गुण शिशु को उपहार स्वरूप प्रदान किया है अतः उस मनोवृत्ति का किसी मनोवैज्ञानिक से अध्ययन करा कर उसे अपने स्वभाविक गुणों के विकास में सहायता करना चाहिए।

किन्तु सभी शिशुओं की छुपी हुई प्रवृत्तियों के बीज एक से नहीं पनपते। किसी बालक में विकास अन्यों की अपेक्षा तेजी से होता है, किसी की प्रवृति का विकास संतोषप्रद हो पाता है किसी का यौवन में होना प्रारम्भ होता है। यही कारण है कि युवावस्था में सबकी मानसिक प्रवृत्तियां में जन्मगत प्रभेद दीख पड़ता है। बच्चे की कौन सी विशिष्टता किस मर्यादा तक विकसित होगी, यह बात बच्चे के जन्म जात संस्कारों पर निर्भर है।

बच्चेकी मनोवैज्ञानिक रीति से शिक्षा का प्रबन्ध अनिवार्य है। मनोविज्ञान इस बात पर जोर देता है कि बच्चे के स्वभावतः गुणों को उचित रीति से बढ़ने फैलने, पूर्ण परपक्व होने का अवसर प्रदान किया जाय। उसके सहज गुणों का विकास मार-पीट, सख्ती, अनुपयुक्त वातावरण, बुरी संगति—कहीं रुक न जाय। यदि बच्चे के चारों ओर एक तीव्र सहानुभूतिमय दृष्टि रक्खी जाय और प्यार से उसकी बुद्धि को समझ कर उसका विकास किया जाय तो जन्मगत दोष पनप नहीं सकते और उसकी महत्ता का पूर्ण प्रकाश हो सकता है।

## शिशु का काल्पनिक जगत्—

मानव इस विविध-विघ्न बाधा संकुल जगत के घमंडों से त्रस्त होकर निज इच्छा तृप्ति के लिए एक काल्पनिक जगत् की सृष्टि किया करता है। स्वप्न भी हमारी छुपी हुई इच्छाओं की एक पूर्ति का मार्ग है। हमारे बच्चे भी २ से ७ वर्ष की अवस्था तक अधिकतर काल्पनिक जगत में विचरण किया

करते हैं। ८ वर्ष पश्चात् बालक को स्वप्नजगत् तथा इस कटु जगत् में अन्तर प्रतीत होने लगता है।

शैशवावस्था में किए गए अत्याचार इसी अवस्था में अपना विषैला प्रभाव दिखाना प्रारम्भ करते हैं। बच्चों के भय, भूत प्रेत, हव्वा इत्यादि के डर दिल में बैठ कर घोर मानसिक यंत्रणा पहुंचाता है, बच्चा कायर डरपोक एवं बिछड़ने वाला बन जाता हैं। कभी कभी कामोत्तेजना का शिकार बन कर आत्मग्लानि का शिकार बनता है और पाप के विचारों से दबा रहता है।

सच पूछा जाय तो बचपन में ही जीवन निर्माण का कार्य होता है। अव्यक्त मन में जो अच्छे बुरे संस्कार बैठ जाते हैं वह जीवन पर्यन्त चलते हैं। अतः बच्चों के कोमल मन में केवल उत्तम, स्वास्थ्य प्रद, हिम्मत एवं बड़प्पन के विचार ही जमाइये। बच्चे ऐसे शान्त एवं आनन्द के वातावरण में रहें कि उत्तम संस्कार ही उन पर पड़ें। शिशु का काल्पनिक जगत् महत्त्वाकांक्षा से ओत प्रोत बनना चाहिए। शिवाजी, प्रताप, इत्यादि पर शैशवास्था में ऐसा ही प्रभाव पड़ा था।

## चिढ़ने वाला शिशु—

प्रायः हम सभी थोड़ा बहुत चिढ़ते हैं किन्तु कुछ बालकों में अन्यों की अपेक्षा चिढ़ने की प्रवृत्ति अधिक होती हैं। यह निर्बल इच्छा शक्ति एवं न्यून सामर्थ्य की द्योतक है। ऐसे शिशुओं का स्वभाव अत्यन्त सुकोमल होता है तथा "अहं" की भावना अत्यन्त बढ़ जाती है। चिढ प्रायः बच्चे की किसी विशेष दुर्बलता की सूचक होती है। हम चिढ़ते तब ही हैं जब दूसरे हमारे "अहं" वृत्ति पर आक्षेप करते हैं। चिढ़ने से हीनत्व की भावना शिशु में घर कर जाती है।

स्मरण रखिए, प्रत्येक बच्चा किसी विशेष क्षेत्र में अनुपम है इस क्षेत्र को खोज निकालने से चिढ़ दूर हो जाती है। बच्चे का मज़बूत पहलू खोज निकालिये। उस क्षेत्र में वह सदैव विजयी होता है। ऐसे बच्चे को ऐसा अवसर दीजिए कि उसकी छिपी हुई शक्ति को निकलने का मौक़ा मिले और वह अपने क्षेत्र में मजबूत बने।

## मन्द बुद्धि बालकों की समस्याएँ—

कितने ही शिशुओं का मानसिक एवं भावात्मक वातावरण इतना नीचा होता है कि वे अपनी शक्तियों को विकसित नहीं कर पाते। ऐसे बच्चे प्रायः शारीरिक विकास में भी पंगु रह जाते हैं। फिसड्डी बच्चों में शारीरिक रोग तो होते ही हैं किन्तु उसमें संगति का भी कम प्रभाव नहीं होता। जब बालक में मानसिक न्यूनता होती है तो उसकी बुद्धि मन्द पड़ जाती है, तब शारीरिक दुर्बलता उसके पिछड़ने का एक सहायक कारण हो जाती है।

ऐसे मन्दबुद्धि के बालकों को बड़ी सहानुभूति से पढ़ाने की आवश्यकता है। इनके लिए एक पृथक् कक्षा होनी चाहिए और प्रत्येक बालक पर पृथक् पृथक् ध्यान देना चाहिए जिससे प्रत्येक क्षेत्र की न्यूनता पूर्ण हो जाय। सहानुभूति, जिम्मेदारी एवं प्रशंसा से हम कितने ही मन्दबुद्धि बच्चों को पूर्ण मनुष्यत्व प्राप्त करने में मदद कर सकते हैं। इस तत्त्व का ध्यान रहे कि बच्चे की हिम्मत सदैव बढ़ती रहे, उसे निरन्तर प्रोत्साहन, उत्साह, सहानुभूति, मिलती रहे। स्कूल में घर जैसा वातावरण बन जाय।

## अपराधी बच्चा—

अनेक छोटे छोटे बालक हीन बुद्धि होने के कारण अपराध करते हैं। कुछ दूषित वातावरण के शिकार होते हैं, कुछ को भयंकर ताड़ना, सजाएँ, मिली हुई होती हैं अतः उनकी प्रेरणा निंद्य कामों की ओर हो जाती है। शरारती बच्चों में ये ही छिपी हुई अव्यक्त क्रियाएँ प्रकट हुआ करती हैं। अपराधी बच्चों की अन्य शक्तियें प्रायः अत्यन्त विकसित होती हैं जिनकी पर्य्याप्त वृद्धि द्वारा उनका यह स्वभाव दोष मूल से मिटाया जा सकता है।

## बच्चों का वातावरण—

बच्चे का भी हमारी तरह एक व्यक्तित्व है। अतः जिस कुटुम्ब में बालक बड़ा होता है उसका प्रभाव उसके विकास पर अधिक पड़ता है। यदि बच्चे की मानसिक शक्तियों के विकास के लिए योग्य वातावरण का सृजन किया जाय, तो बचपन से ही बालक की शक्तियां विकसित होनी प्रारम्भ हो जांय और अवस्था के साथ साथ बढ़ती जावें। जिन जिन मानसिक शक्तियों के अनुकूल संगति और परिस्थितियों में बच्चा रहता है, वे शक्तियां उसमें उत्पन्न होती तथा विकसित होती हुई दिखाई देती हैं। सुखी दम्पति के शिशु बड़े संतुष्ट एवं सुखी रहते हैं। उनके मुख पर संतोष की छटा रहती है।

ढीठ तथा ज़िद्दी बच्चे अधिक प्रेम के कारण हो जाते हैं। अतः प्रेम करते समय संयम, सीमा तथा उचित अनुचित का सदैव ध्यान रखना चाहिए। इसी प्रकार अधिक डाटने फटकारने से भी बच्चे के "अहं" भाव पर भयंकर ठेस लगती है।

## चौदह वर्ष के उपरान्त बालक—

चौदह वर्ष पश्चात् बालक युवा हो जाता है और यौवन की कुछ अस्पष्ट तरगें उसके मनः प्रदेश में उद्वेलित होने लगती हैं। वह अपने आपको प्रकट करने के लिए शृंगार करता, गाता बजाता, सिगरेट पाता फिरता है। वह अपने आपके साथ साथी या मित्र जैसा व्यवहार चाहता है। उसकी दबी हुई इच्छाएँ क्रमशः निकलनी शुरू होती हैं। इस अवस्था में जो मानसिक एवं शारीरिक परिवर्तन होते हैं, उनके अनुसार ही व्यवहार होना चाहिए।

ऐसा नव-युवक सहानुभूति की आकांक्षा करता है तथा जो कोई सहानुभूति प्रदर्शन करता है उसी का चिर दास हो जाता है। किन्हीं बच्चों में अतृप्त कामेच्छा उत्तेजित होकर भयंकर उत्पात मचाती है और वे निंद्य पथों में पड़ कर जीवन बिगाड़ लेते हैं। अतः माता पिता को चढ़ती जवानी में सदैव सतर्क रहना चाहिए। काम वासना का जागरित होना स्वभाविक है। इसे दबाने के स्थान पर निकलने के नए अवसर देने चाहिए—चित्रकारी, संगीत, कविता, व्यायाम, आदर्श जीवन में प्रवेश करा सकते हैं। कितने ही युवा काम वासना के प्रकाशन को भयंकर पाप समझ कर आत्मग्लानि के शिकार रहा करते हैं। पाप की कल्पना से वे इतने चिंतित रहते हैं कि यह कारण हीनत्व की भावना ग्रन्थि निर्माण कर देता है जो उन्हें सदैव कष्ट देती रहती है। माता पिता को अपना उत्तर दायित्व समझ कर युवा से व्यवहार करना चाहिए।

## बड़े सावधान रहें—

बच्चों से व्यवहार करने में बड़े सावधान रहिए। कोई भी गंदी बात यदि उनके सामने की जायगी तो वे तुरन्त सीख लेंगे। वे तो अनुकरण करना जानते हैं। पास पड़ौस में यदि कुछ भी घृणित वातावरण है तो वे गालियाँ ज़रूर सीख जाँयगे। आपकी आदतों, व्यवहार, बात चीत का प्रभाव उन पर अत्यधिक पड़ता है। अतः उनसे व्यवहार करते समय बड़े सावधान रहिए! सावधान रहिए!!

---

## पाठकों को सूचना।

जितना कागज सरकारी आज्ञा के अनुसार हम खर्च कर सकते थे, उतने पृष्ठ इस अंक में दिये हैं। परन्तु मनोविज्ञान संबंधी लेख अभी बहुत अधिक बाकी हैं। जो फरवरी और मार्च इन दो महीनों के अंकों में पूरे होंगे। जो सामिग्री आगे छपने वाली है वह अत्यन्त ही महत्वपूर्ण है जो इस अमूल्य सामिग्री को प्राप्त करना चाहते हैं, उन्हें शीघ्र ही अपना चन्दा भेजना चाहिए। देर करने वाले इन अंकों से वंचित रह जांयगे। —सम्पादक।

# मनोविज्ञान के कुछ विचित्र प्रश्न।

( मनुष्य की इन्द्रियों की करतूतें )

## मन तक पहुंचने की सड़कें—

बाह्य संसार का ज्ञान मन तक पहुँचाने के लिए हमारी इन्द्रियें सड़कों के समान हैं। हम स्वाद, घ्राण, श्रवण, दृष्टि, और स्पर्श इन पांच सड़कों द्वारा मन-मन्दिर में पदार्पण करते हैं। जिस व्यक्ति की कोई सड़क टूट फूट जाती है, उसका मन संकीर्ण हो जाता है, ज्ञान न्यून हो जाता है, उसे अपने जीवन में कोई न कोई भारी कमी का बोध होता रहता है। अन्धे, बहरों की दशा पर विचार करें तो आपको विदित होगा कि इनका ज्ञान दूसरों की अपेक्षा कितना कम है। इन्द्रियजनित ज्ञान के बिना इच्छा, द्वेष, सुख दुःख कल्पना इत्यादि किसी की सम्भावना नहीं है। यहाँ हम पांच इन्द्रियों से सम्बन्धित मनोरंजक प्रश्नों पर विचार करेंगे।

## प्रेम का जल भी मिश्री से अधिक मीठा है क्यों?

जिसको हम साधारण भाषा में स्वाद कहते हैं वह केवल स्वाद ही नहीं होता वरन् अनेक तत्वों से बनी हुई मिश्रित संवेदना होती है। उसमें स्वाद के साथ साथ गन्ध, दृष्टि। मनोभावनाओं, मनः स्थितियों का भी आश्चर्यमय सम्मिलन होता है। केवल स्वाद मात्र से. बिना स्पर्श किये या देखे हुए हम बहुत थोड़े पदार्थों का नाम बता सकते हैं। प्रेम का बल आत्मभावना, अपनत्व के कारण ही इतना सुस्वादु बन जाता है। जब वह जल मुँह में जाता है तो हमें अपने प्रेमी का स्नेह, सौजन्य, दर्शन स्पर्शन, श्रवण-भाषण, की मधुर स्मृतियां अनायास ही याद आ जाती हैं। प्रेम-जल में यही मधुमयी सुधा है। किसी ने प्रेम को पीयूष कहा है तो किसी ने हलाहल—

यह वह मिश्री की डली है, कि न इससे बात करे।
संखिया खा कर मरे, पर इश्क़ ज़बां पर न धरे॥

इस शैर में इश्क को संखिये से भी जहरीला बताया गया है। इसमें सिर्फ मनोभावनाओं का अन्तर है।

## जुक़ाम में भोजन का स्वाद क्यों बदल जाता है?

जुकाम में नाक की शक्ति निर्बल पड़ जाती है। स्वाद का गंध से अन्योन्याश्रित सम्बन्ध है। जुकाम के रोगी की गन्ध शक्ति निर्बल पड़ जाती है। जब उसे गन्ध नहीं आती, तो स्वाद में भी परिवर्तन हो जाता है। जल का स्वाद कुछ और हो जाता है और अत्यन्त सुस्वादु भोजनों में भी मजा नहीं आता। यही कारण है कि कुनैन नाक बन्द करके पीते हैं। टट्टी में नाक पर कपड़ा बाँध लेते हैं। स्वाद में गंध का अधिक भाग सम्मिलित है।

## क्या स्वाद प्राकृतिक डाक्टर है?

स्वाद पर नेत्र का प्रबल प्रभाव पड़ता है। तभी तो हल्दी इत्यादि के रंगों, चांदी के वर्कों से भोजन को सजाते हैं। फलों के रंग देखिए उनसे उनका स्वाद प्रकट हो जाता है। बहुत से स्वाद में स्पर्श-संवेदन भी सम्मिलित रहते हैं। कोमल, सख्त, व खुरदरे पदार्थों के स्वादों में अन्तर रहता है। जो पदार्थ देखने, स्पर्श करने, में रोचक होते हैं, जिन्हें हमारा अन्तः मन स्वीकार करता है वे स्वास्थ्यप्रद तथा जो अस्वादिष्ट अरोचक वस्तुएँ होती हैं वे हानिकारक सिद्ध होती। मधु, फल, दूध, तरकारियाँ, खोपरा स्वादिष्ट होने के कारण स्वास्थ्यप्रद हैं। इसके विपरीत तीक्ष्ण मिर्च मसाले, मादक द्रव्य, चूरन चटनी तथा अन्य बुरे स्वाद वाली चीजें स्वास्थ्य का ह्रास करती हैं। प्रकृति ने स्वाद उत्पन्न ही इसलिए किया है कि हम स्वादिष्ट वस्तुएँ खाएँ और बल, बुद्धि, प्रतिभा की वृद्धि करें। खट्टा प्यास बुझाता है, नमकीन भड़काता, मीठा भूख कम करता तथा कडुवा शक्ति का क्षय करता है।

## हमारी नासिका के दो द्वार क्यों हैं ?

हम कौनसी हवा में सांस ले रहे हैं, वह शुद्ध है या दुर्गन्धित, उसमें कैसे कैसे विषैले पदार्थों का सम्मिश्रण है यह बताना और साथ ही रक्त साफ़ करने के लिए बराबर पर्य्याप्त वायु पहुंचाना हमारी नासिका का कार्य है। यदि नाक का एक द्वार होता तथा वह जुकाम या और किसी कारण से कार्य न करता तो मृत्यु तक संभव थी। अब एक द्वार ख़राब होने पर दूसरा फेफड़ों के लिए वायु पहुंचाया करता है। दूसरे को आराम करने का अवसर मिल जाता है।

## क्या गंध मीठी हो सकती है ?

गंध के लिए यह जरूरी है कि वह गैस ( Ges ) की तरह की हो। पुष्प, कपूर, कस्तूरी उड़ने वाला होने के कारण नाक के अन्दर लगी हुई गन्ध की कोठरी तक पहुंच जाय। गन्ध का बोध तो हमें तब ही हो सकता है जब गन्ध के परिमाणु उस कोठरी तक पहुंच जांय। मिठास, कड़वापन या खटाई गन्ध के गुण नहीं हैं। ये तो स्वाद के विषय हैं। यह नाम तो विविध गन्धों के उस प्रभाव का है जो आदमी की विकार-वृत्ति पर पड़ता है। एक ही गन्ध कई पुष्पों के विकार भावनाओं को भिन्न भिन्न प्रकार के प्रभाव दिखा सकती है। एक ही गन्ध एक को सुखदायक तो दूसरे को दुःख देने वाली सिद्ध हो सकती है।

## श्रवण की विचित्रताएँ—

मनोजगत् में नयनाभिराम चित्रों एवं सुरीली तानों की सामग्री पहुंचाने में हमारे कान का विशेष महत्त्व है। वायु में प्रत्येक शब्द कम्पन उत्पन्न करता है और ये लहरें हमारे कान के सूक्ष्म परदे पर प्रभाव डालती है। वहां से यह कम्पन छोटी छोटी नाड़ियां द्वारा मस्तिष्क में पहुंचते हैं।

सुरीले और कर्णकटु ध्वनियों का अन्तर हमारे मस्तिष्कों के अभ्यसों का अन्तर है। साधारणतः जो शब्द एक निश्चित उतार चढ़ाव से होते हैं वे सुरीले तथा असमान्तर शब्द शोर मालूम होते हैं मनुष्यों की अपेक्षा अन्य जानवरों की श्रवणशक्ति प्रबल होती है। हमारी श्रवण शक्ति में एक यह विचित्रता है कि यह इन्द्रिय अनेक भिन्न भिन्न शब्दों को जो एक संग निकलते हैं और इस पर प्रभाव डालते हैं, यह सब ध्वनियों को भिन्न भिन्न ( Distinguish ) समझती है। सबको एक साथ नहीं मिला डालती।

## मन की सामग्री जुटाने में दृष्टि का स्थान—

नेत्र प्रकाश तथा रंग को ग्रहण करते हैं और अन्य इन्द्रियों से संयुक्त होकर कार्य करते हैं। रंग-बिरंगी मिठाइयों, फलों इत्यादि का देख कर अनायास ही मुँह में पानी भर आता है। यह इन्द्रिय भी वायु कम्पनों से प्रभावित होती है। जब मस्तिष्क पर चोट लगती है तो दृष्टिनाड़ी उत्तेजित होती है और उस उत्तेजना का प्रभाव मस्तिष्क तक पहुँचता है। मन उस प्रभाव का अनुवाद यथा पूर्व करता है। इस प्रकार यह स्पष्ट है कि मनको ज्ञान से परिपूर्ण करने में नेत्रों का विशेष भाग है।

## दृष्टि आंख मिचौनी खेलती है—

एक सीधी लकड़ी जल में टेढ़ी मालूम होती है। रात्रि में मार्ग में पड़ी हुई रस्सी काला सर्प प्रतीत होती है। तेज धूप में दूर पर चमकीली रेत पानी से भरा हुआ तालाब मालूम होता है। अत्यन्त दूरी पर स्थित पर्वत श्रेणियां बिल्कुल निकट दीखती हैं ? डरा हुआ व्यक्ति छाया को भूत समझता है। सिनेमा के पर्दे पर तसवीरें चलती फिरती मालूम होती हैं। सुन्दर पुरुष के साथ खड़ा हुआ कुरूप आदमी और भी अधिक बदसूरत मालूम होता है। चावल बेचने वाले ज्यादातर चावल काले कम्बल पर डाल कर उनकी ख़राबी को दबा देते हैं, यह सब नेत्रों का भ्रम है।

———